तुम बापू के लाल जवाहर

महात्मा गांधी 125वाँ जन्मवर्ष समारोह समिति, मध्यप्रदेश का प्रकाशन

तुम बापू के लाल जवाहर

भिलाई में 27-29 मई 1995 को आयोजित परिसंवाद की सम्पादित पुस्तकाकार प्रस्तुति

प्रकाशक

कनक तिवारी

राज्य समन्वयक

महात्मा गांधी 125वाँ जन्मवर्ष समारोह समिति, मध्यप्रदेश
संस्कृति भवन, बाणगंगा, भोपाल - 462 003 (म. प्र.)
दूरभाष : 574458, 557040 फैक्स : 0755-575733

राज्य समन्वयक की ओर से ....

महात्मा गांधी 125वाँ जन्म वर्ष समारोह समिति द्वारा अपने प्रतिष्ठा आयोजनों के लिपिबद्धकरण के काम को सदैव प्राथमिकता दी गयी है। यह इसी का प्रतिफल है कि लगभग पन्द्रह से अधिक प्रकाशनों की एक श्रृंखला, समिति ने अपने पिछले एक वर्ष में आपको सौंपी है। समिति का यह मानना है कि देश को मनुष्यता के बचाव के लिए जिन विचारों का परिवेश चाहिए वे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी और देश की आजादी के लिए अपने प्राण न्यौछावर करने वाले महापुरुषों के जीवन और आचरण में निहित हैं। समिति ने अपनी गतिविधियों में विचारों की अभिव्यक्ति और संवाद की सम्भावनाओं को हमेशा से ही प्रधानता दी है। अनेकानेक सामयिक और ज्वलन्त प्रश्नों पर एकाग्र, समिति के आयोजनों में देश भर के जितने गांधीवादी विद्वानों, स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों और विचारकों की भागीदारी हुई है वह न केवल व्यापक है बल्कि प्रोत्साहक भी। यह अनवरत् सिलसिला 30 जनवरी 1999, राष्ट्रपिता की शहादत की अर्धशती की तिथि तक जारी रहेगा।

इस पुस्तक में समिति की भिलाई में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी **तुम बापू के लाल जवाहर** में प्रतिभागिता करने वाले महत्वपूर्ण चिन्तकों एवं विचारकों की अभिव्यक्तियों का समावेश है। पुस्तक तीन दिवसीय संगोष्ठी का संपादित सार है। विश्वास है समिति के प्रयत्नों का स्वागत होगा।

● कनक तिवारी

उत्थान पर ध्यान देना चाहिए

● **दिग्विजय सिंह**

मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश एवं
उपाध्यक्ष, महात्मा गांधी 125वाँ जन्मवर्ष
समारोह समिति, मध्यप्रदेश

अक्षर कोई ऐसा नहीं है जिससे कोई मंत्र न प्रारंभ होता हो, कोई ऐसी वनस्पति नहीं है जिससे औषधि न बनती हो और कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसमें खूबियां न हों, आवश्यकता सिर्फ खूबियों और स्पष्ट सोच को पहचानने की है। गांधी जी ने नेहरू की वैज्ञानिक वृत्ति को धर्म निरपेक्षता, विचार को पहचाना और प्रारंभ से ही अपना उत्तराधिकारी चुन लिया था। इसी का परिणाम रहा कि पं. नेहरु सबसे कम उम्र के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष बने। सिर्फ वैज्ञानिक वृत्ति सिर्फ विज्ञान तक ही सीमित नहीं है बल्कि प्रत्येक विषय व प्रश्न पर बिन्दुवार विचार कर किसी निष्कर्ष तक पहुंचना है, ज़ो विलक्षण प्रतिभा पं. नेहरु ने महात्मा गांधी से सीखी थी।

म. प्र. में उदारीकरण की दिशा में कार्य करते हुए गांधी जी की सोच के अनुरूप ग्रामीण उद्योगों को बढ़ावा दिया जा रहा है वहीं बड़े कारखानों को भी काफी तेजी से बढ़ाया जा रहा है। आज की परिस्थिति में दोनों का साथ-साथ चलना आवश्यक है। बड़े उद्योग जहां तकनीकी आधारित हैं वहीं ग्रामीण उद्योग श्रम आधारित है जिससे सामंजस्य बना हुआ है। म. प्र. शासन द्वारा महात्मा गांधी वं आचार्य विनोबा भावे

की जन्म शताब्दी समारोह को लगातार आयोजित किये जा रहे हैं।

कांग्रेस का पुनर्निर्माण हमारी पीढ़ी ही कर सकती है और आज कांग्रेस में पुनर्निर्माण की आवश्यकता है। कांग्रेस कार्यकर्ताओं को सत्ता संघर्ष से उबरकर कांग्रेस की नीतियों के अनुरूप गरीबों, पिछड़े वर्गों के उत्थान पर ध्यान देना चाहिए ताकि कांग्रेस की पहचान कायम रखी जा सके। भिलाई पं. नेहरु का स्वप्न था और इन दोनों नेताओं तथा भिलाई के प्रबंध निदेशकों ने भिलाई में एक विशिष्ट कार्य संस्कृति का निर्माण किया है। समिति के आयोजनों ने जो वातावरण बनाया है उसके लिए मैं इसके राज्य समन्वयक तिवारी जी को बधाई देता हूँ । हम पूरी कोशिश करेंगे कि गांधी जी की बातें सरकार की प्राथमिकता बनें।

दो महापुरुषों की सोच पर खड़ी तरक्की की बुनियाद

● **अरविन्द नेताम**

पूर्व केन्द्रीय कृषि-सहकारिता, राज्यमंत्री

पण्डित नेहरु में बापू के व्यक्तित्व की छाप थी। पं. नेहरु ने महात्मा गांधी की सोच के अनुरूप ही देश का नव निर्माण किया। इन्हीं दोनों महापुरुषों की सोच का नतीजा है कि देश किसी विकसित राष्ट्र से किसी मामले में पीछे नहीं है। दोनों महापुरुषों की सोच पर देश की तरक्की की बुनियाद खड़ी है। इसी का परिणाम है कि देश के लोगों ने दोनों नेताओं को सरमाथे बिठाया और महात्मा गांधी को राष्ट्र पिता एवं पं. नेहरु को राष्ट्र निर्माता का सम्मान किया था। पं. नेहरु द्वारा संयुक्त उपक्रमों की स्थापना की नीति ने ही देश को आज पूरे विश्व में एक नेतृत्वकर्ता के रूप में सामने लाया।

पं. नेहरु के स्वप्नों की नगरी भिलाई में इस कार्यक्रम का होना अपने आप में महत्वपूर्ण हो गया है। भिलाई में पं. नेहरु की औद्योगिक

नीतियों और महात्मा गांधी की विचारधारा के अनुरूप देश का आधारभूत उद्योग है और पूरे विश्व में इसने एक स्थान बना लिया है।

गांधीजी क्रान्तिकारी थे

● **शशिभूषण**

गांधीजी रूढ़िवादी नहीं थे, वे क्रांतिकारी थे। वे राम नाम जपने वाले साधु नहीं थे। गांधीजी सच्चे अर्थों में क्रांतिकारी थे । 'करो या मरो' जैसे नारे तो लेनिन तक ने नहीं दिये। उनका सत्याग्रही होना भी उस काल के लिए सबसे आश्चर्यजनक बात रही है। पं. नेहरु का मस्तिष्क गांधीवादी और हृदय समाजवादी था। उनकी सोच को वैज्ञानिक गांधीवादी सोच भी कह सकते हैं। गांधी और नेहरु का समन्वय कल्याणकारी था।

पण्डित जी ने गांधी जी की भाषा ही बोली

● **अनिल शास्त्री**

मैं सबसे पहले कनक तिवारी जी को बहुत धन्यवाद देना चाहता हूँ जिन्होंने करीब एक माह पहले मुझसे फोन पर दिल्ली में बात की और यहाँ पर आज आने के लिए आमंत्रित किया। उन्होंने मुझे विद्वानों के बीच में लाकर खड़ा कर दिया है। मैं स्पष्टता में विश्वास रखता हूँ। इसलिए स्पष्टता के साथ यह कहना चाहता हूँ कि मेरी गिनती विद्वानों में नहीं है। मैं एक साधारण समाजसेवी हूँ। आप ही के प्रदेश में जो भारत का सबसे बड़ा प्रदेश है उसी प्रदेश के इंदौर शहर से करीब 15 कि.मी. दूर सुसंदा ग्राम में जिसका नाम **शास्त्री ग्राम** रखा गया है, वहाँ पर शास्त्री जी के नाम से एक बच्चों और महिलाओं के लिए संस्था मैंने स्थापित की थी। आज से सात-आठ वर्ष पहले जिसका भारत के राष्ट्रपति ने उद्‌घाटन किया। एक तो मैं उससे जुड़ा हुआ हूँ और इसके अतिरिक्त दिल्ली में मुझे

सौभाग्य प्राप्त हुआ है लाल बहादुर शास्त्री इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट को स्थापित करने का। मैं इस बात से सहमत हूं कि शास्त्री जी भी गांधी जी और जवाहर लाल जी के सच्चे अनुयायी ते। मैंने अपनी आँखों से देखा कि किस तरह से शास्त्री जी प्रधानमंत्री बनने के बाद भी सादा जीवन व्यतीत करते थे और गांधी जी की बात किया करते थे। मैं स्कूल में पढ़ता था। जिस दिन उन्होंने प्रधानमंत्री पद की शपथ ली और घर आये तो मैंने कहा कि आप अपने शयन कक्ष में कालीन बिछवा लें तो उन्होंने कहा बेटे अनिल तुम ऐसा क्यों कह रहे हो? मैने कहा-आप भारत के प्रधानमंत्री हो गये हैं। उन्होंने कहा मैं भारत का प्रधानमंत्री हूं। जहां पर लाखों लोगों के पास रहने को मकान नहीं हैं, लाखों लोगों के पास खाने के लिए खाना नहीं है। मेरे कमरे में यदि तुम लोगों ने कालीन बिछवा दी तो मुझे नींद नहीं आयेगी और फिर गांधी जी की बात करने लगे।

पंडित जवाहर लाल नेहरु से उंन्होने बहादुरी सीखी। आत्मसम्मान की रक्षा कैसे करना चाहिए, वह सीखा। स्वाभिमान की रक्षा करना सीखा। आप लोगों को याद होगा कि 1965 की लड़ाई में जब अमेरिका ने भारत को गेहूँ देने से मना कर दिया और धमकी दी यदि पाकिस्तान के खिलाफ लड़ाई बंद नहीं की तो अमेरिका से जो गेहूँ आता है वह भारत को नहीं दिया जायेगा। शास्त्री जी ने देशवासियों का आव्हान किया। उनको ठेस पहुँची। भारतवर्ष के स्वाभिमान को ठेस पहुँची। उन्होंने कहा कि हम हफ्ते में एक दिन भोजन नहीं करेंगे, लेकिन अमेरिका के सामने खाने के लिए हाथ नहीं फैलायेंगे। मुझे ये भी याद आता है जब वे 3 जनवरी, 1966 को दिल्ली के पालम हवाई अड्डे से ताशकंद के लिए रवाना हो रहे थे तो कुछ अमेरिकी पत्रकारों ने उनसे मजाक किया उनके छोटे कद को देखते हुए। पंडित जवाहर लाल नेहरू को भी कभी भी अपमान बर्दाश्त नहीं होता था और शायद यही बात उन्होंने पंडित जी के साथ में काम करते हुए सीखी। ये बातें इसलिए बता रहा हूँ कि क्योंकि मेरा परिचय कनक तिवारी जी ने शास्त्री जी के पुत्र के नाते यहां पर किया है तो मैं समझता हूं कि

थोड़ा फर्ज होता है कि जिस महापुरुष के पुत्र के नाते मेरा परिचय संगोष्ठी में हो रहा है उनके बारे में एक आध बात बताऊँ, तो अमेरिकी पत्रकारों ने उनसे कहा कि आप ताशकंद जा रहे हैं रूस के प्रधानमंत्री के निमंत्रण पर वहां पर । आपकी मुलाकात पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खान से होगी । वे एक जनरल हैं और उनका कद छः फुट से ज्यादा है। आपका कद केवल पाँच फुट दो इंच है। आप उनसे कैसे बात करेंगे ? कैसे वार्ता करेंगे? तो उन्होंने कहा कि जब हम एक दूसरों से बात करेंगे तब अयूब खान सिर झुकाकर बात करेंगे और मैं सिर उठाकर बात करूंगा।

अब मैं आज की संगोष्ठी के विषय पर आना चाहूँगा। सन् 1916 को पंडित जी बहुत सौभाग्यशाली वर्ष मानते थे। वह कहते थे। अंग्रेजी में मैंने एक बार सुना था मैं बच्चा था । मेरे पिताजी से कह रहे थे और साथ में जगजीवन राम् जी थे, उनसे कह रहे थे—देट 1969 इज ए वेरी वेरी लकी ईयर फार मी, बिकाज़ 1969 आई गॉट मेरिड टू कमला एण्ड 1916 आई मीट मोहन दास करमचन्द गांधी। 1916 में उनका विवाह हुआ और 1916 में पहली बार जब वह केवल 27 वर्ष के थे और गांधी जी 47 वर्ष के थे। उनकी पहली मुलाकात 1916 में हुई। कमला जी ने उनके जीवन में आकर उनकी पारिवारिक जिन्दगी पूरी की। दूसरी ओर गांधी जी ने यह साबित कर दिया कि जवाहरलाल जी जिस राजनीतिक गुरु की तलाश में थे वह उनको मिल गया। पंडित जी ने अपनी 'मेरी कहानी' किताब में इस पर प्रकाश डाला है और मैं उन्हीं के शब्दों में इस पहली मुलाकात का संक्षेप में वर्णन करना चाहता हूँ। उन्होंने कहा मैं गांधी जी से पहले-पहले 1916 में बड़े दिन की छुट्टियों में लखनऊ कांग्रेस में मिला। दक्षिण अफ्रीका में उनकी बहादुराना लड़ाई के लिए हम सब लोग उनकी तारीफ करते थे लेकिन हम नौजवानों में बहुतों को वह बहुत अलग तथा राजनीति से दूर व्यक्ति मालूम होते थे। उन दिनों उन्होंने कांग्रेस या राट्रीय राजनीति में भाग लेने से इंकार कर दिया था और अपने को प्रवासी भारतीयों के मसले की सीमा तक बांध रखा

था। इसके बाद ही चंपारण में मिले गोरों के कारण होने वाले किसानों के दुख दूर करने में उन्होंने जैसा साहस दिखाया और उस मामले में उनकी जो जीत हुई उससे हम लोग उत्साह से भर गये। हम लोगों ने देखा कि वह हिन्दुस्तान में भी अपने इस तरीके से काम लेने को तैयार हैं। उनसे सफलता की भी आशा होती है। किसी भी क्षेत्र के किसी व्यक्ति को, ऐसे मेरा मानना है, एक ऐसे मार्गदर्शक अथवा नेता की जरूरत होती है जिसके कहने पर वह अपने आपको न्यौछावर कर देता है। किसी भी भाँति, किसी भी नेता या मार्गदर्शक को आवश्यकता होती है किसी ऐसे व्यक्ति की, जो उसके अनुसार अपने को चलाए, ढाले, आगे बढ़े तथा इतिहास के पन्नों पर अपनी मुहर अंकित कर दे।

मित्रों, कुछ लोग ऐसे होते हैं जो जमाने के पीछे चलते हैं, कुछ ऐसे होते हैं जो जमाने के साथ चलते हैं, कुछ ऐसे होते हैं जिनके पीछे जमाना चलता है। महात्मा गांधी और जवाहर लाल नेहरु उन महापुरुषों में से थे जिनके पीछे जमांना चला। पंडित जी ने ये महसूस किया कि गांधीजी की राजनीति ही भारत का भविष्य, जो उस समय उनको अंधकार में लगता था, बना सकती है, उज्जवल कर सकती है, देश को आजाद करा सकती है और गांधीजी की आवाज ज्यों-ज्यों भारतीय जन की आवाज बनकर देश के एक छोर से लेकर दूसरे छोर तक जाने लगी, नेहरु मन ही मन दृढ़ होते चले गये। क्या था उस छोटे कद काठी के आदमी में जिसने नेहरु को इतना प्रभावित किया? नेहरु जी ने इसका उत्तर अपने एक वर्णन में किया है। उन्होंने कहा- देश के राजनीतिक आकाश में बादल का एक छोटा टुकड़ा दिखायी दिया जो बड़ी तेजी से बढ़ा और फैलते-फैलते सारे आकाश में छा गया। वह नया तत्व था मोहनदास करमचंद गांधी। यह पंडित जी ने अपने एक वर्णन में लिखा। इसी तरह से **राष्ट्रपिता** नामक अपने भाषण में जवाहरलाल जी ने कहा था, देश को आजादी के बाद जब गांधीजी नहीं रहे, उस समय की बात है। उन्होंने कहा, जिसको मैं कोड कर रहा हूँ–उसकी आवाज औरों की आवाज से कुछ जुदा थी वह एक शांत और धीमी आवाज थी लेकिन जन समुदाय की चीख से ऊपर

सुनाई देती थी वह आवाज कोमल और मधुर थी किंतु उसमें कहीं न कहीं फौलादी स्वर दिखाई देता था। उस आवाज में शील था। वह हृदय को छू जाती थी फिर भी उसमें कोई ऐसा तत्व ता जो कठोर और भय उत्पन्न करने वाला ता। उस आवाज का एक-एक शब्द अर्थपूर्ण था और उसमें एक तीव्र आत्मीयता का अनुभव भी होता था।

नेहरु जी ने उस आवाज को पहचाना और उसके पीछे खिंचते चले गये और फिर एक ऐसा भी अवसर आया जब वह पूर्ण रूप से गांधीजी के प्रति समर्पित हो गये। दूसरी ओर गांधीजी ने जवाहर लाल जी को देखा, समझा और लोगों को भी उनके बारे में समझाया । गांधीजी ने पंडित जी के बारे में कहा कि बहादुरी में कोई उनसे बढ़ नहीं सकता है और देश प्रेम में उनसे आगे कौन जा सकता है? कुछ लोग कहते हैं कि जवाहर जल्दबाज और अधीर हैं। यह तो इस समय का एक गुण है, फिर जहाँ उनमें एक वीर योद्धा की अधीरता और तीव्रता है, वहाँ एक राजनीतिज्ञ का विवेक भी है। इस प्रकार माना जाने लगा कि गांधीजी और पंडित जी एक दूसरे के पूरक थे। ऐसी बात नहीं थी कि गांधी जी और जवाहर जी में कोई भेद नहीं था। दोनों कई मुद्दों पर अलग-अलग दृष्टिकोण रखते थे, गांधीजी जितने नरम थे, नेहरू जी उतने ही गर्म थे। अनेक अवसर आये जब जवाहरलाल ने सार्वजनिक तौर पर गांधी जी की आलोचना की लेकिन जब गांधी जी ने एक बार निर्णय दे दिया तो उसके बाद जवाहरलाल जी ने सिर झुकाकर उसे स्वीकार कर लिया और बिना कुछ सोचे समझे उस पथ पर चल पड़े। आप लोगों ने शायद यह भी पढ़ा होगा। मैंने भी कहीं पर पढ़ा है कि जब मतभेद गांधी और नेहरुजी का हो जाता था तो गांधी जी तो संयम बरतते थे, धैर्य में विश्वास रखते थे लेकिन जवाहरलाल जी को गुस्सा आ जाता था। एक बार उन्होंने कुछ पत्रकारों से कहा कि ये बुढ्ढा कौन सी भाषा बोलता है? कभी-कभी इसकी भाषा मुझे समझ में नहीं आती। पत्रकारों ने गांधीजी से कहा कि जवाहरलाल जी कहते हैं, तो उन्होंने कहा कि मैं मानता हूँ कि हम लोगों में कुछ मतभेद है और जवाहर ये भी कहता है कि उसे मेरी भाषा समझ में नहीं

आती है, लेकिन मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ यकीन दिलाता हूँ कि धरती पर से मेरे चले जाने के बाद जवाहरलाल नेहरु मेरी ही भाषा बोलेगा और आने वाले समय में हमने इस बात को देखा। हमारी मजबूत संसदीय लोकतंत्र प्रणाली नेहरु जी की सबसे बड़ी देन है तभी एक बार आचार्य कृपलानी ने कहा था कि मैंने दुनिया के इतिहास में ऐसा लोकप्रिय प्रधानमंत्री नहीं देखा। वह बच्चों के लिए चाचा नेहरु, युवतियों के लिए सुन्दर राजकुमार, सिद्धांतों के लिए महापंडित, दार्शनिकों के बीच में महान दार्शनिक और विज्ञानवेत्ताओं के लिए कुशल वैज्ञानिक, साहित्यिकों के लिए महान साहित्यिक और राजनीति में कुशल पंडित हैं। ऐसा कोई क्षेत्र नहीं बचता है जहां पर उनकी धाक न हो।

वैचारिक पुष्टता की सम्भावनाएँ

● प्रो. महेशदत्त मिश्र

मेरी भाषण देने की तो बिलकुल इच्छा नहीं है पर चूंकि विषय मेरी रुचि का है और मैं समझता हूं कि सबसे ज्यादा अगर भ्रम किसी बात को लेकर फैला और फैलाया गया तो उसमें गांधीजी के उत्तराधिकारी के विवाद का था और गांधीजी और नेहरू जी के बीच में वैज्ञानिकता के बारे में कोई बड़ी खाई और उसी से फिर वह जो अर्थ व्यवस्था हमारे देश में विकसित हुई, आजादी के बाद गांधीजी की गैर हाजिरी में उससे जो प्रश्न उठा उसका सारा दोष नेहरु पर मढ़कर लोग एक और नई बात पैदा कर रहे हैं कि जितना जो कुछ चला है विवाद, उसमें हमको 2-3 बातें मुख्यतः सोचनी चाहिए। अभी बहुत से वक्ताओं ने कहा कि गांधी जी के उत्तराधिकारी के रूप में नेहरु जी ने काफी काम किया पर मैं फिर प्रश्न आपके सामने रखता हूँ। जब गांधी जी ने एक प्रयोग किया और सारी दुनिया एक प्रयोग है। हम जितना जो कुछ करते हैं और पूरा विश्व इतिहास जो
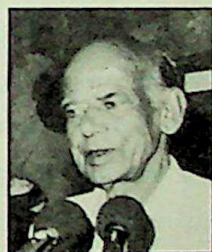
है, प्रयोगों से भरा हुआ है। सबने अपने अपने ढंग से प्रयोग किए हैं। गांधी के प्रयोग की महत्ता हो गई। आजादी के लिए सबने काम किया। क्रांतिकारियों ने भी और अहिंसावादियों ने भी और क्रांतिकरियों की बहादुरी का भी कोई जवाब नहीं। हम सब उनके लिए नत मस्तक हैं। चाहे भगत सिंह का नाम लीजिए चाहे किसी और का लीजिए बहुत से उदाहरण हैं। क्या जाँबाज लोग थे और वे खास तरह का नैतिक साहस देश का बनाये रखे। गांधी जी का आंदोलन व्यापक हुआ तो लोगों की उसमें भागीदारी हुई । महिला, बूढ़े, अपंग सब तरह के कितने लोग उसमें आ गए और बच्चे हम भी बचपन से तमाशे में शामिल थे तो कुछ एक अजीब सा लोगों में एक वह था कि गांधी हमको, सबको एक तरह से स्वतंत्र, सैनिक बना रहे हैं। सारा देश स्वतंत्रता सैनिक था और खास तौर पर वह लोग जो उन दिनों जेल न जाकर भी हम लोगों के साथ में किसी न किसी तरह से सहयोग करते थे। इस सारे देश ने एक तरह से .स्वतंत्रता का आंदोलन चलाया। सबसे ज्यादा महत्व मैं देता हूँ गरीबों को जो सबसे ज्यादा महत्व के थे। जो बहुत कमजोर स्थिति में से जेल आये और एक बार जेल आकर ऐसे बरबाद हुए कि फिर उठ न पाये। हमालिए क्या फर्क था? हमार पिता बड़े वकील थे। चार नहीं पाँच दफे और दस दफे जेल जाते तो क्या फर्क पड़ता? वह कहते ही थे, तुमको जितने दफे जेल जाना है जाओ। जब मैं कहूं कि बाहर आओ तो पढ़ डालो। पढ़ाई बंद मत करना। ये जो स्वतंत्रता का जो गांधीजी का आंदोलन था अद्‌भुत पर वह सब एक प्रयोग ही था वह प्रयोग सफल़ हुआ।इसलिए ज्यादा श्रेय गांधी जी को मिला। सुभाष बाबू ने उनको राष्ट्रपिता कहा जिनका उनसे वैचारिक मतभेद था। सुभाष बाबू चाहते थे, जब युद्ध छिड़ेगा तो फिर हिन्दुस्तान को कुछ भी कर गुजरना चाहिए। और यह बात गांधीजी को सहनीय नहीं थी। वह तो अहिंसात्मक ढंग से ही चलना चाहते थे। फिर देखिए ईश्वरीय संयोग कि सुभाष बाबू बाहर चले गए तो उन्होंने वहाँ प्रयोग किया। इस देश में रहकर वह प्रयोग करते तो क्रांति का क्या होता? कोई उस पर चर्चा करने की जरूरत नहीं है पर ये अच्छा

ही हुआ कि वह बाहर गये और बाहर जाकर उन्होंने दबाव डाला और गांधीजी को दो बार आंदोलन चलाने पड़े। एक व्यक्तिगत सत्याग्रह का और एक अगस्त क्रांति का। किसी देश में पराधीन लोग ऐसे वक्त पर इसी तरह का आंदोलन नहीं चला सकते थे, जबकि उनका मालिक जो है या उन पर राज करने वाले जो शासक हैं वह अपने जीने-मरने की लड़ाई लड़ रहे हैं और हम अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे हैं। ये थोड़े से सिरफिरे लोग ये क्या कर रहे हैं? गांधी जी की भी खूबी थी, अहिंसा को उन्होंने इतना प्रतिघातिक कर दिया था कि व्यक्तिगत सत्याग्रह में हम लोगों ने अहिंसा के आधार पर व्यक्तिगत सत्याग्रह प्रारंभ किया। शुरू से ही यह हो गया कि एक-एक व्यक्ति जायेगा। इससे थोड़ी सी ऐतिहासिक भूल इस देश में फैल गई है। गांधी जी ने सिर्फ विनोबा भावे को ही प्रथम सत्याग्रही बनाया। उसके बाद बहस में मत जाइए। मैं तो चूंकि प्रत्यक्षदर्शी हूँ, दूसरे दिन तो उन्होंने ब्रह्मदत्त को भेज दिया। तीसरे दिन प्यारेलाल जी गए। पंडित नेहरु चूंकि उनसे बात करके लौट रहे थे, तुरन्त पकड़ लिया गया तो सत्याग्रह तो कर ही नहीं पाये। खैर वह जाने दीजिए। कोई बहुत महत्व की बात नहीं है। वह फिर यानी अंग्रेजों को समझ ही नहीं आया कि व्यक्तिगत सत्याग्रह में क्या-क्या करें? वह शांतिपूर्वक ढंग से चला और हमारे हजारों लोग उसको देखते थे। भाषण उगले और कइयों को पैदल चला दिया। अंग्रेज सरकार थी बयालीस का जो आंदोलन है, उसके बारे में बड़ा विवाद था, क्योंकि क्रिप्स मिशन ने जो अपमानित किया हिन्दुस्तान को या हिन्दुस्तान की जो मांगें थी उसको नकारा। उस पर गांधीजी बौखला गये। बहुत से नेताओं ने अधिकांश नेताओं ने गांधीजी को सलाह यह दी कि इस वक्त आंदोलन को बिलकुल मत छेड़िए क्योंकि जापान बढ़ रहा है आगे । इस वक्त अगर आप आंदोलन छेड़ेंगे तो कुछ भी हो सकता है। स्वाभाविक है हम लोग जेल में भी यही सोचते थे न मालूम कभी अंग्रेज हारने लगे तो हममे से दस-बीस हजार को फांसी चढ़ा देंगे। वह जो काल बीता है बयालीस का और पैंतालीस का तब तक यही होता रहा। न मालूम क्या हो जाये? नजर बंद तो है ही, ठीक

है। हमारे शशिभूषण जी तो किले में बंद थे। इस तरह कई कहाँ थे तो कई कहां थे। ये जो दो आंदोलन चलाये गांधीजी ने तो सुभाष बाबू को कहा कि अहिंसा से भी कुछ हो सकता है और उन्होंने उनको राष्ट्रपिता कहा। कितनी बड़ी बात है।

गांधी के व्यक्तित्व के कारण गांधी के कार्यक्रम, उनके प्रयोग कुछ ऐसे ढंग से सफल होते चले गए तो उनको महामानव मान लिया गया। महात्मा कह दिया था। बहुत पहले कह दिया था। असहयोग आंदोलन के दौरान कुछ दिन पहले और जो कुछ उन्होंने 1940,41,42 में किया, उसने तो सारी दुनिया को चौंका दिया। इसलिए उनको प्रमुख रूप से श्रेय दिया जाता है। वह गलत नहीं है पर श्रेय सबका हुआ। अब उनके उत्तराधिकारी की बात है तो वह जनवरी 1942 में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक हुई वर्धा में । तब तक ये बात उठी चूंकि व्यक्तिगत सत्याग्रह में विनोबा जी को उन्होंने प्रथम सत्याग्रह बनाया, उस पर से नेताओं में जरा खलबली थी और विशेषकर पंडित जी में, तो उसका जवाब उन्होंने दिया। उस अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी में पहले तो कहा कि मैंने विनोबा को प्रथम सत्याग्रही बनाया। उसका कारण यह है कि वह अहिंसा में उनका विश्वास मेरे सिद्धांतों पर चलने और उनकी अटूट श्रृद्धा और उनके प्रयोगों से भी कुछ आगे उनके ब्रहमचर्य की बात थी। मैं ईर्ष्या करता हूं क्योंकि मैंने तो ब्रहमचर्य का व्रत 30 वर्ष की उम्र के बाद लिया। वह ऐसी तारीख थी जबकि मेरी आध्यात्मिक वाणी थी और पंडित नेहरु जिन्हें जवाहरलाल कहते थे, जवाहरलाल मेरा राजनैतिक उत्कर्ष था। आप सबने यह शब्द इस्तेमाल नहीं किया। इसका कारण यह कि गांधीजी ने अपना राजनीतिक उत्तराधिकार पंडित नेहरु को दिया। उसका कारण यह था कि पंडित नेहरु का जैसे धीरे-धीरे विकास हुआ, वैसे ही उनका वैचारिक विकास हुआ और समाजवाद के प्रति उनका रूझान और 1936 में जब लखनऊ कांग्रेस के अधिवेशन में अध्यक्ष के रूप में उन्होंने समाजवाद में अपनी आस्था प्रकट की, तबसे विवाद चल पड़ा था और काफी उनको कॉर्नर किया। उसकी तफ्तीश में नहीं जाना

चाहता। आप लोग देखेंगे कि वह सब जितने यहाँ के उद्योगपति थे वह बौखलाये । पंडित जी को बंबई बुलाया और उनसे चर्चा की। पंडित जी ने कहां, लोकतांत्रिक तरीके से हम समाजवाद लाना चाहते हैं। यह बात तो हमेशा कही कि हिंसा में उनका विश्वास नहीं है यह भी कहा, पर चूंकि उन्होंने अपने रूझान बता दिये थे तो सब को लगता था कि यह होंगे तो समाजवाद की तरफ जरा तेजी से कदम बढ़ाएंगे । ज्यादातर हमारे यहाँ तो उनका चिन्तन और मनन में उतना ध्यान नहीं था। यह सब भी गांधी जी जानते थे। गांधी जी समाजवादी थे कि नहीं थे या समाजवादियों को कितना चाहते थे यह भी प्रश्न बड़ा अजीब सा रहा। सुभाष बाबू को पुनः अध्यक्ष बनने का विरोध किया। विरोध बाद में किया। पहले काम किया। पहले तो कहा ही नहीं। पहले तो कहते तो हम काहे को वोट देते सुभाष बाबू को ? सीधी बात है। तब तो हम जितने नौजवान थे सबने सुभाष बाबू को वोट देकर और हुल्लड़ भी मचाया था। वे त्रिपुरी में रहते हैं। बांद में सुभाष बाबू को जबलपुर बुलाया तो उनका जोरदार स्वागत और जुलूस निकाला और फारवर्ड ब्लॉक में जाते-जाते रह गए क्योंकि गांधी के भक्त ज्यादा थे उसमें कोई शक नही। तब तक यह तय नहीं था कि गांधी और सुभाष में जो मतभेद हैं वह कितने ज्यादा गहरे हैं और गहरे थे। सवाल यह है कि उत्तराधिकारी कहा उनको तो आपस में मतभेद मान्य थे क्योंकि औद्योगीकरण के बारे में जिसके बारे में नेहरुजी का पत्र व्यवहार आ चुका है। नेहरुजी का एक ही कहना था कि लोग जो चाहेंगे वह होगा और यही उनका बचाव है और लोगों का मतलब था कि उस वक्त के जितने भी राजनीतिज्ञ नेता थे, अर्थशास्त्री थे, सलाहकार थे और जो भी इस तरह की मांग करेंगे उनको हमको पूरा करना पड़ेगा। एक जनतांत्रिक सरकार के नाते आपके कुछ आदर्श सही भी हो सकते हैं पर अगर उस व्यवहार को लोग नहीं मानेंगे तो मैं क्या करूंगा? ये उनका बचाव था। पर जो गलती हुई है वह हुई है।

प्राथमिकता से नेहरुजी ने शास्त्री जी से दो-तीन बार कहा कि हमने गांधी का रास्ता छोड़कर के गलती की। यह बात मुझको विश्वम्भरनाथ

पाण्डे ने तब कही जब नेहरु भी नहीं रहे थे और शास्त्री जी भी नहीं थे। मैंने कहा कि यह तो सार्वजनिक विवाद का विषय होना चाहिए। नेहरुजी से पूछा जाता कि भई कौन सी बात है। कहां आपने गलती की? कौन सा रास्ता छोड़ा? अब हमें क्या-क्या करना है? आइये। सीधी बात यह थी कि वह मौलिक तथा मूलभूत के अर्थशास्त्र इस ढंग का चलना चाहिए जो वैज्ञानिकता, जो आविष्कार, जो टेक्नॉलाजी अधिक से अधिक लोगों के काम आ सके । उसको हम ग्रहण करेंगे इसलिए उन्होंने कहा कि मैं मशीन का विरोधी नहीं हूँ और 16 जुलाई को बुलाया गया लेकिन उसी के बाद सितंबर में उनके पास चला गया नौकरी छोड़कर। हरिजन कॉलोनी में हम लोगों को बुलाया गया। मशीन के बारे में तथा उनके बारे में कहा जाता है कि एक बार गांधी जी ने ड्रायवर से कहा कि "तेज चलाओ"। यानी दिल्ली की सड़कों पर गांधी जी बिड़ला कें ड्रायवर को बार-बार कह रहे थे कि जरा तेज चलाओ। मैं तो उनके पास बैठने में डरता था। मोटर में बैठता तो मालिक से कहता कि यह क्या एक्सीडेंट करा लेना चाहते हैं। तेज चलवाने का क्या मतलब है? तो वहाँ जाकर उन्होंने मुझसे कहा कि 16 जुलाई को जब मैं हरिजन कॉलोनी में निकला तो वहां उन्होंने साफ कहा कि मेरे बारे में गलत प्रचार चला है कि मैं मशीन का विरोधी हूँ। अगर इस देश में गाँव-गाँव में बिजली पहुंच जाये तो क्या मैं चाहूंगा कि आठ घंटे आदमी पुराने ढंग के चरखे से काम करे? बिजली से भी चरखा चलाया जा सकता है। यह बात उन्होंने उस वक्त कह दी थी सन् 1946 में और अब हम देख रहे हैं कि हमने अंबर चरखा तो चला दिया देश में और हरदा में हमारा बहुत सघन क्षेत्र बनने वाला है। हरदा में तो कितने लोगों ने बिजली से प्रयोग कर डाले थे। तभी तो टोकना पड़ा क्योंकि अभी तो नियम नहीं है। यानी अंबर चरखा बिजली से चल सकता है। यह हो गया। गांधी जी की उस वक्त भविष्यवाणी थी। वह आज सही हो सकती है। बशर्ते खादी बोर्ड वाले उसे मान लें।

तब जब गाँव-गाँव यानी अधिकांश गाँवों में बिजली पहुंच गई है

तो स्वाभाविक है और चरखा ही आपकी आर्थिक बुराई को आर्थिक समस्या और आर्थिक तंगी को पच्चीस-तीस प्रतिशत एक साल के भीतर दूर कर सकता है। अगर हम सब लग जायें तो चरखा और कतनी की बात इतनी प्रासंगिक हो जायेगी, तो गांधी जी के मन में तो यह था कि मेरी कोई भी बात को जवाहरलाल इन्कार नहीं करेंगे। पर यह जो उन्होंने लगा दिया कि लोग जैसा चाहें स्वाभाविक है कि लोगों को मानस उतना बदल नहीं पाया है। जैसे आजादी आने को थी और बिड़ला जी ने एक बम्बई प्लान चला दिया। गांधी जी ने इसके जवाब में श्रीमन जी से कहा और श्रीमन जी ने गांधीयन प्लान दिया। अब ये सब चीजें जो हमको आपको पढ़ना चाहिए। ये बहस तो शुरू हो गई थी। पर गांधी जी के मर जाने के कारण या हत्या हो जाने के कारण वह बहस बन्द हो गई थी और नेहरुजी ने वही किया। वे योजना के तो बड़े शौकीन थे, क्योंकि वह रूस का पेटर्न था तो उन्होनें योजना आयोग उसी वक्त बना दिया था। योजना समिति जिसके सुभाष बाबू अध्यक्ष थे और हरिविष्णु कामत जो आई.सी.ए. से इस्तीफा देकर आये ते वह इसके महामंत्री थे। ये सब कुछ चल रहा था और वह गांधी जी के नहीं रहने के कारण रोज वह चर्चा होने से कि सर्वोदयी दृष्टिकोण, सर्वोदयी आर्थिक दृष्टि कोण अधिक से अधिक लोगों की भागीदारी का दृष्टिकोण और उस दृष्टि से लघु उद्योगों का महत्व ये जितना हम अधिक से अधिक और खास तौर पर उसमें भी उनका जोर ता कि लोग अपने जरूरत की चीजें, आम चीजें वहीं पैदा करें। ग्राम स्वावलंबन तो संभव नहीं था पर क्षेत्र स्वावलंबन हो सकता है। हम क्षेत्र को ऐसी मदद दें कि वह लघु उद्योगों के जरिए अपने, क्योंकि खाने के बाद कपड़ा ही सबसे बड़ी जरूरत थी और यदि कपड़ा उद्योग का विकेन्द्रीकरण हो जाता तो इस देश की आर्थिक अवस्था बहुत बदल गई होती। गाँव का भी उद्धार हो जाता और उस पर जो गांधी जी का जोर था वह भी दूसरों ने लिया। जब विनोबा ने उस पर जोर नहीं दिया तो हम दूसरों को क्या दोष दें। विनोबा जी सिर्फ अपने भूदान में लगे रहे। एकांगीपन के कारण दूसरी चीजों की तरफ ध्यान

ही नहीं दिया। उसका सरकारीकरण हो गया। खादी बोर्ड का तो वह भी हो जाने दिया और उस पर कोई अंकुश भी नहीं लगाया। मेरी उनसे सबसे बहुत बहस हुई है। मेरा एक स्वभाव ही समझिए या कुछ भी कि विनोबा जी से तो मेरी बहुत बहस हुई। क्योंकि जेल में दो बार साथ गए तो घंटे भर घूमते थे। गांधी से तो बड़ी मुश्किल से मौका मिलता था बातचीत करने का। जे.पी. के साथ पी.एस.पी. में तो रहे ही खैर ये तो व्यक्तिगत बातें हैं।

सवाल यह है कि गांधी जी के बाद गांधी जी का जो दृष्टिकोण था, समाज को बदलने का और आर्थिक दृष्टि से जो छोटे उद्योगों की नींव डालने का विशेष कर चरखा आपको मान्य होगा, आजादी आयी नहीं थी। 1946 की बात थी। वाइसराय कौंसिल बन गई थी और उन्होंने मुख्यमंत्रियों को बुला कर कहना शुरू किया कि अब मिलों को ज्यादा बढ़ावा मत दो। वह जो मिलों की तरफ से मांग थी स्पाइंडल्स की जो उसमें बंगाल के घोष और जे.पी. मद्रास के ये दो राजी थे। बाकी के मुख्यमंत्रियों ने आना कानी की, क्योंकि इधर सरकार अपने ढंग से मुख्यमंत्रियों को प्रेरित और उत्प्रेरित करते रहते थे। मुझे अच्छी तरह से याद है शुक्लजी जब उनसे मिलने आये तो गांधी जी काफी उत्तेजित थे। उन्होंने कहा कि मैं कोई हीला-हवाला नहीं चाहता। उनको साफ बताओ कि तुम्हारे हाथों स्पाइंडल्स पर रोक लगाओगे? वे चरखे के प्रति कितने स्नेही थे। थोड़े शब्दों में कह देना चाहता हूं। कल एक बोझ हमारे ऊपर डाल दिया गया है। उसको कर्तव्य समझ कर निभाना है और उसमें मुझे ध्यान यह रखना है कि उसका कोई पैसा मेरे व्यक्तिगत हित में न आये। उसके लिए मैंने कह दिया है कि घोषणा करने के पहले तक कह दो कि ये बिना वेतन के करने वाला है जो खर्च लगेगा वह लगेगा। उसका पैसा मेरे पेट में नहीं जाने दो है, क्योंकि गांधी जी का काम, काम करना है और कर्त्तव्य है तो सवाल है कि यह जो चिन्तन है। समग्र चिन्तन है और समग्र कार्यक्रम है और एक दूरदर्शिता के द्वारा समाज को आगे ले जाने के लिए है। कहाँ पर झगड़े की जरूरत है? उसको बाकी लोग नहीं समझे, यही सवाल सर्वधर्म

समभाव का है, धर्म निरपेक्षता का है। इसमें गांधी जी का दृष्टिकोण इतना साफ था और इतना आगे चल करके था कि उसको भी लोग समझ नहीं सके और चालीस वर्ष में यह हुआ कि लोग कहते कि सांप्रदायिकता बढ़ी और गांधी जी की हत्या हुई। गांधी जी हत्या एक आदमी ने की थी। रोज-रोज ये हो रही है। तो ये बड़ा भारी प्रश्न आपके हमारे सामने चुनौती भरा हुआ है कि जिस देश में गांधी के इतने अनुयायी हों, उस देश में आम तौर पर यह देखा गया है कि इन चालीस बरसों में गांधी की हत्या हुई है, जबकि व्यक्तिगत रूप से कुछ काम बहुत बड़े हुए हैं। भूदान का चमत्कार हुआ। कांग्रेस को सत्ता से हटाने का चमत्कार हुआ। इनको कम मत मानिए और उनके प्रति आदरपूर्वक मैं कहता हूं काम तो बहुत बड़े हुए थे पर वह एकांगी हुए थे। समग्र दृष्टिकोण रख कर के समग्र कार्यक्रम की दिशाएं जैसी गांधी जी चाहते थे वैसी नहीं हुई है और उन पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया इसलिए आज प्रासंगिकता का जो सवाल है सबसे बड़ा श्रेय तो गोर्वाच्योव को जाता है कि जिसने अपने देश की इतनी बड़ी सत्ता को बिखेरते हुए लोकतंत्र का मार्ग प्रशस्त कर दिया है। उन्होंने तो ज्यादा नहीं कहा। गोर्वाच्योव ने तो इतना कहा कि मैंने गांधी को कम पढ़ा है। मैंने गीता पढ़ी है। ध्यान से अब देखिए कैसे वह व्यक्ति यहां से हजारों मील दूर बैठा हुआ गांधी को गीता से जोड़ रहा है। तो होता यह है कि ऐतिहासिक रूप से आप व्याख्या कीजिए तो सारा जितना झगड़ा है दुनिया में वह व्यक्ति बनाम समष्टि का है। अब एक नये ढंग से इतिहास को हमें देखना है। जहाँ व्यक्तिवाद होता है, वहाँ समष्टिवादी कार्यक्रम यानी समाज के हित का कार्यक्रम हो जाता है और गांधी और नेहरु में अधिक से अधिक समानता जिस बात की है वह है समष्टिवादी। इन दोनों में व्यक्तिवाद कम है। नेहरु जी को अपने प्राइम मिनिस्ट्री की चिन्ता तो थी पर वह इतने व्यक्तिवादी भी न थे कि दूसरों को खत्म कर दें और सब झगड़ों में भी मैं रहूँ। कृपलानी जी के साथ निकला हूं फिर भी मैंने देखा कि मैं उनको व्यक्तिवादी मान लेता हूं, क्योंकि स्वार्थी नहीं थे। ये तो उन्होंने देखा कि मुझको नीति चलाना है। तो

ऐसे लोग जो कि मेरी नीति के आलोचक हैं और पसंद नहीं करते उनको मार तो नहीं दूं। फिर भी वह चाहते ते कि जे.पी. आ जायें कांग्रेस में। उनसे मेरी पचास मिनट बात हुई। नेहरू से मैंने कहा तो कि वह आपकी विदेश नीति के खिलाफ हैं और मैं इसलिए परेशान था कि पी.एस.पी. में विदेशी नीति की आलोचना की तो गुंजाइश ही नहीं है। नेहरू जी ने उत्तराधिकारी होने के नाते सौ फीसदी सफलता पाई है। गांधी जी के अनुकरण में तो वह विदेश नीति का जिस तरह से उनने संचालित किया, बावजूद जो कहा गया और उनके जो आलोचनात्मक व्यंग्य बाण थे और कुछ अखबार जो सांप्रदायिक अखबारों में बहुत ही भद्दे तरीक से हमारी आलोचना होती थी, ऐसी आलोचना करते थे, खिल्ली उड़ाते थे तो ये सब होने के बावजूद भी दुनिया ने माना कि नेहरु शांति के मसीहा थे और गांधी का बैक ग्राऊंड तो नहीं था। गांधी और नेहरु को आप विदेशी नीति में अलग नही कर सकते, आर्थिक नीति में मैंने कहा था कि नेहरुजी ने अपना बचाव कर लिया था कि उनसे प्राथमिकता की गलती हुई थी कि शुरू से दो योजनाओं में कृषि पर और लघु उद्योग पर जोर देना था। तब फिर इस देश में इतनी खुशहाली आ जाती कि उसके बाद ये उद्योग शायद हम बिना किसी सहायता के खड़े कर लेते। इससे ज्यादा डिटेल में मैं नहीं जाऊंगा। मैंने सिर्फ स्वीकार किया कि थोड़ी इशारे की बात पूर्व वक्ता ने बहुत प्रश्न उठाये, बहुत सब चुनौती भरे। मैं स्वागत करता हूँ उन सबका, क्योंकि अब जो थोड़ी जिम्मेदारी लेना है, उसमें सबका उपयोग हो किसी व्यक्ति को यह नहीं सोचना चाहिए कि धुंध में हम तो पहली बात गांधीवाद कोई चीज नहीं है। उन्होंने कह दिया ता कि मैं कोई वाद अपने बाद नहीं चाहूंगा। गांधी मार्ग, गांधी प्रणाली है कि एक सत्य अहिंसा और प्रेम के द्वारा चीजों को खोजना और अधिक से अधिक लोगों की भागीदारी जिस काम में हो सके उसको करने का प्रयत्न करना चाहिए और उस दिशा से समाज को बदलाव करना और समाज का बदलाव करने में जो रुकावट हो उनके खिलाफ सत्याग्रह करना। यह सत्याग्रह की जो निरंतरता है वह जाती नहीं है। जैसे मैं

कहता हूं कि कम्युनिस्टों को हटा क्यों नहीं देते। जब तक दुनिया में शोषण है, तब तक समाजवाद की बात करने की गुंजाइश नहीं है। उसी तरह से गांधी के समाजवाद की या गांधी की लोगों से भागीदारी है वह समाजवाद है। उनका आंदोलन समाजवादी था जिसमें सब लोग शामिल थे। अब जिस बात की जरूरत है हमको, वह वैचारिक समन्वय की बात करके, हम सब समन्वय में से, जो अच्छा है, उसको देकर के और उसमें समाज में आगे प्रभुत्व कर सके। हम तो चालीस बरस के हो गए तो प्रभुत्व करने की बात ही नहीं है। तीन शेर मैं आपको सुना दूंगा और उनमें समानता थी तो सदाकत भी थी, ईमानदारी भी थी –

सदाकत हो तो दिल सीने से खिंचने लगते हैं,
भाई हकीकत खुद को मनवा लेती है, मानी नहीं जाती।

फिर ऊंचाईयों की बातें करते हैं लोग। गांधी को हमने कह दिया 19952-53 में कि अगर दूसरे ग्रहों से लोग यहाँ पर आयें तो उनके आगे यह वैज्ञानिक कुछ नहीं, क्योंकि वो पहले आयेंगे तो वो ज्यादा वैज्ञानिक होंगे। इस समाज को बदलने के लिए किसी ने अगर दिशा दी तो बात अलग है कि जिसने समग्र मानवीय मूल्यों को समाज पर स्थापित करने में एक दिशा दी, गांधी का जीवन उनको चमत्कृत करेगा। वह देखिए न बुलंदी की बात करते हैं। बुलंदियों का तसव्वुर भी रह गया पीछे। यानी द इन्टायर कन्सेप्ट ऑफ ग्रेटनेस लेफ्ट बिहाइंड। आदमी कितना ऊपर जा सकता है? जो हम सोचते हैं, उससे भी ऊंचा जा सकता है। बुलंदियों का तसव्वुर भी रह गया। पीछे पहुँचकर इतनी बुलंदी पे सांस रुक गई और एक आत्मीयता का शेर है कि मैं कहता रहता हूं कि अब कहां गांधी जी आयेंगे और काहे तो आयेंगे? तो क्या जरूरत है। वो तो अपना सब कुछ करके प्रयोग हमको दे गए। अब उसमें से दिशाएं खोजनी है। हम अपनी एकांगिता को जरा अलग रख कर, अब सर्वोदय वालों में भी जाता हूँ, यही कहता हूँ भाई बहुत एकांगी कार्य मत करो। जरा समग्रता लाओ। ऐसा गांधी जी महाराज कह गए। मेरी तलाश करोगे कहीं न पाओगे (मोहनदास करमचन्द गांधी

अब नहीं आने वाले)। मैं अपने स्वभाव का एहसास छोड़ जाऊंगा। मैंने जो नजदीकी स्थापित की है। दुनिया से या तुमसे या सबसे उसका अहसास छोड़कर जा रहा हूं। उसका समझो उसको बनाने की कोशिश करो। उसमें जहाँ-जहाँ ये कमि़यां हैं, खाइयां हैं, उनको पूरी करके ऐसा चिन्तन और कार्यक्रम बनायें जिसमें साज को बदलने की सभी दिशाएं दे सकें, क्योंकि सर्वधर्म समभाव का यही संदेश है।

ये भी एक बड़ी गलती हो गई कि धर्म निरपेक्षता सबसे ज्यादा जोर दिया तो उसमें बुद्धिवादी ने उसका मजाक उड़ा दिया और उसे सेक्युलरिज्म करके, क्योंकि उसमें वह गुंजाइश नहीं है। लोगों को मिलाने की समन्वय करने की गुंजाइश नहीं है। धर्म से निरपेक्ष रहने की बात है तो राज्य के लिए तो ठीक पर व्यक्ति या राजनेता या सामाजिक कार्यकर्त्ता है वह कहां का धर्म निरपेक्ष होगा? वह तो अपने धर्म को मानेगा। दूसरे के धर्म का आदर करेगा। तो यह बड़ी खाई हमारे वैचारिक ढंग से रह गई तो सबसे बड़ी चुनौती यही है कि हम लोगों में नफरत के बीज बोये जा रहे हैं। उनको दूर करने के लिए जितना बन सके, यह काम सबका है, उसमें सबको पड़ना है और इस चिन्तन का ऐसा प्रगाढ़ कर देना है कि उसमें दूसरा नफरत का जो चिन्तन है, उसकी बात भी कोई नहीं कर पाये। आज ऋतंभरा के भाषण में बड़ी भीड़ लगती है। क्या हम वह परिस्थिति ला सकते हैं कि लोग ऋतंभरा से कह दें, अब मत फैलाओ, हो गया? बहुत इसलिए हमारे ऊपर सिर्फ चुनौती है। परिस्थितियां चाहें लाद दी गई हैं पर हम उसको नहीं करना चाहेंगे तो न करेंगे। इसलिए इस उम्र में भी मैं काफी उत्साहित और आशा भरी दृष्टि से जहाँ भी बोलता हूँ आप सबसे आशीर्वाद माँगता हूं कि मुझे दो-तीन वर्ष और जीने के लिए कामना कीजिए। आशीर्वाद दीजिए तो शायद मैं भी कुछ कर पाऊं। इस तमाशे में वैचारिक रूप से कुछ पुष्टता आयी है तो वह अभी आयी है। 2-4 वर्ष में, क्योंकि इतना ज्यादा प्रहार हुआ है। इस चीज को लेकर सिर्फ गांधी पर नहीं नेहरु पर यानी जो हमारी अस्मिता बनी थी, हिन्दुत्व की जो अस्मिता दुनिया भर में छायी थी, उसी पर प्रहार है कि हम जिस नाम से हिन्दू

जाने जाते थे वे ही लोगों के दिमाग से खैर ये तो अब ये करने लगे, वह करने लगे। अब तो विचार कर रहा है कि कितनी भिन्न परिस्थिति में और उसमें कहना कि सरदार पटेल कुछ नहीं कर पाते। थोड़ी बहुत जमीन और खींच लेते और इससे ज्यादा कुछ नहीं। वह जो अमेरिका का षडयंत्र था, कश्मीर के मामले में शुरू से, 1945 से जो आज तक चल रहा है। दोस्ती हमारी हो जाती है। व्यापारिक सम्बन्ध हो जाते हैं पर उनके दिमाग से यह चीज जाती नहीं है कि हिन्दुस्तान बहुत बड़ा देश होने वाला है और यह पश्चिम के लोग, देश और शक्तियां दोनों को लड़ाने की कोशिश करते हैं। वह तभी होगा जब इस देश में सर्वधर्म समभाव की जड़ मजबूत होगी। नफरत का वातावरण कम होगा। यही हमारा सबसे बड़ा हथियार है। पाकिस्तान के खिलाफ जो लोग बातें करते हैं, क्योंकि कुछ लोग ऐसी हरकतें कर रहे हैं जो पाकिस्तान को प्रचार, सबसे ज्यादा मदद तो पाकिस्तान को कर रहे हैं तो वे साम्प्रदायिक हो रहे हैं। वे उसका केस मजबूत कर रहे हैं। यह राष्ट्रीय सेवा है। क्या किया जाये? मैं ज्यादा बोलना नहीं चाहता। आप सबको धन्यवाद

दिशाभ्रम दूर करना चाहिए

● श्यामाचरण दुबे

पहली बात जो मुझे कहनी था वह यह है कि गांधी जी और उनके बाद नेहरु जी की अनुष्ठानिक अर्चना हम इतनी कर रहे हैं कि उनके विचारों की गहनता को समझने का प्रयत्न और क्रिया के क्षेत्र में उनका उपयोग करने की ओर इतना ध्यान नहीं दिया जा रहा है। पिछले दशकों में एक प्रवृत्ति हुई जो उभरी है कि भारत पश्चिम से पुनः भारत आता है तो उसका सम्मान होता है। भजन कीर्तन की परम्परा इस देश में पुरानी रही है, वह देशज परम्परा हमें स्वीकार नहीं थी। जब हरे राम, हरे कृष्ण के लोग

अपना सिर खुजाये हुए इस देश में आये और कृष्ण चेतना का संदेश हमें दिया तो वह संदेश हमें स्वीकार हुआ। रजनीश हमारे विद्यार्थी भी रहे। तब वह आचार्य नहीं थे, फिर आचार्य हुए और क्रम मुझे याद नहीं है, भगवान हुए। भगवान होने के बाद ओशो हुए। वैसे उस व्यक्ति की आँखों में कुछ था। भाषा जरूर गलत बोलता था पर प्रभाव पड़ता था । पर रजनीश का प्रभाव भी देश में सबसे ज्यादा उस वक्त पड़ा जब वह अपने गाँव जिसमें हीरे लगे थे और बहुत कीमती घड़ियां थीं, कीमती रॉल्स रॉयस कारों का प्रभाव इस देश पर चढ़ा सके। मैं समझता हूँ कि कहीं ऐसा तो नहीं है कि उत्तर आधुनिकता के सिद्धांत को लेकर जो बहस हुई है और एक नये समाज की परिकल्पना की जा रही है, जो विकेन्द्रीकृत होगा, उस संदर्भ में गांधी जीं में हम नई रुचि ले रहे हैं। रुचि लेना चाहिए क्योंकि गांधी जी के नये विचार और उनको नेहरु जी का समर्थन आज की स्थिति में हमें आधार दे सकते थे किन्तु एक विचित्र सी स्थिति में, गांधीजी के विचार और उनको नेहरूजी का समर्थन आज की स्थिति में हम कितनी बार याद करेंगे? 2 अक्टूबर, 30 जनवरी और गांधीवाद पर जो बहसें होती हैं, भिलाई का होटल वैसे तो बहुत शानदार नहीं है पर दिल्ली में फाइव स्टार होटलों मे गांधीवाद की बहसें होती हैं और मैं समझता हूं कि उसमें गांधीवाद पर जितना विचार किया जाता है, अलग-अलग प्रकार की गोष्ठियों में उतना विचार किया जाता है और एक जगह मैं फँस गया था तो वहां छः शैम्पेन और इंडियन, वैसे इंडियन शैम्पेन तो हो नहीं सकती, क्योंकि शैम्पेन जिला भारत में नहीं है, इस पर भी बड़ी गंभीर बहस हुई।

तो मैं देख रहा था कि गांधी जी की विचारधारा, कॉफियों के अनेक प्रकार, शैम्पेन की तुलना, ये तीन विषय करीब-करीब एक साथ रखे गए थे। यह बड़ी गंभीरता की बात है और आज जो सांस्कृतिक प्रदूषण फैल रहा है, प्रोफेसर मनमोहन सिंह बड़े अच्छे आदमी हैं। हमारी बिरादरी के हैं। प्रोफेसर थे। प्रगतिशील भी थे। उन्हें विश्वास है कि फायदा होगा पर हमें कभी-कभी चिन्ता होती है कि पचास वर्ष तो आश्वासनों के थे, उपदेशों के थे। हमने जनता से कहा कि अनुशासन रखो और अपने पेट की पेटी कस कर बांधो। तब तक इस तरह के आश्वासन दिये जा सकते थे। इस देश की जनता में बहुत धीरज

है पर एक इस तरह का परिणाम हमारे सामने आ रहा है कि अर्थव्यवस्था के साथ एक सांस्कृतिक आतंकवाद, एक वर्चस्व वाद जो हमें यह बताने की कोशिश करता है कि हम अपनी समाज व्यवस्था को किस तरह चलायें और जन संचार के माध्यम हैं वह कभी तुलनात्मक रूप से नहीं बताते कि प्रौद्योगिकी में मूलभूत जो निवेश होना चाहिए, वह हो रहा है या नहीं? हमारे सामने आते हैं आलू के चिप्स। कोका कोला चला गया था फिर वंदनवार लगाकर, स्वागत द्वार लगाकर उसका स्वागत कियाऔर एक और कुछ है पेप्सी (नाम भी भूल जाता हूँ) यह अजीब बात है। अमेरिका में मैंने पेप्सी की एक बोतल पी थी। सोवियत यूनियन गया तो वहां पर उन्होंने कहा-नाऊ व्ही हेव पेप्सी। वहाँ दो बोतल पी थी। हिन्दुस्तान में भी कल शायद एक पी थी। कुल जमा चार बोतलें पी। तो यह बड़ी विचित्र सी स्थिति आयी है और इस विचित्र स्थिति में इन्द्रदेव जी ने बड़ी सही बात की, पर अनुशासित है। इसलिए कुछ रुक गए कि ये जो शोध हम कर रहे हैं उसमें बेशक चिन्तन कितना है। देश की समस्याओं से उस शोध को हम कितनां जोड़ते हैं और हमारे विराट कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में ये शोध कितना सहायक होगा? मध्यप्रदेश के विश्वविद्यालयों से तो सम्बन्ध छूटे पाँछ-छः साल हो गए। वहाँ क्या हो रहा है, ये मुझे मालूम नहीं पर दिल्ली में एक नशा है। एक दार्शनिक थे। समलैंगिक थे। जेल में थे पर एक लहर आती है, एक फैशन आता है, और जहां देखो वहां एक खूको की बात। भई इस देश की समस्या को सोचना है तो खूखो को कहो। किसी शोध छात्रा से पूछो कि बेटी क्या कर रही हो तो वह ऐसी धीमी आवाज में रहस्यमयता भर के कहेगी-खूको पढ़ती हूँ। अब इसमें कौन सी रहस्यमयता है। केम्ब्रिज में बड़ी बहस चल रही थी कि ऑनेनरी डिग्री दी जाये या न दी जाये। वह हमें यह सिखा रहे हैं कि साहित्य पढ़ना हो तो चिन्हों को पहचानों और उन चिन्हों के आधार पर साहित्य को पढ़ो। ऊपर से नीचे, नीचे से ऊपर। अब़ जुनेजा के बराबर मेरी छाती नहीं है। नहीं तो मैं यह कहता कि बायें से दायें, दायें से बायें भी पढ़ो। सब समझ में आ जायेगा। एक सज्जन हैं जिनका नाम यहाँ बहुत नहीं लिया जाता पर इतना अभिवादी व्यक्ति था। दो-तीन सेमिनारों में आप भी शायद लेस्को प्रेस में बैठे हों और उनके साथ बैठने का मौका मिला तो मेरी तबियत होती थी कि एक छोटा सा आइना

हिन्दुस्तान से ले जा कर उनको मैं दे दूं कि वे अपना रूप निहारते रहें पर अहो रूपम, अहो ध्वनि करने की संभावना भी नहीं थी। तो मैं कहना चाहता हूँ कि आज जो हमारी वैचारिक प्रक्रियाएं हैं, वह इतनी विकृत हो गई कि हम प्रासंगिक, सामयिक, जो हमारे जीवन के संदर्भ के लिए उपयोगी हैं, उसके बारे में भूल जाते हैं और इसलिए ये एक दुखद प्रसंग होगा कि हम गांधी जी के विचारों को महज फैशन का एक विषय बना लें। हमें सोचना है पर उस सैद्धांतिक आधार को इतना ऊँचा भी नहीं बनाना है कि भारत के सामान्य जन एक अजीब सी रहस्यमयता में खो जायें और उस कोने की प्रक्रिया में गांधी जी के जो निहितार्थ थे वह भी समाप्त हो जाये। गांधीजी चमत्कारिक भाषा का प्रयोग नहीं करते थे। गांधीजी आम जनता की भाषा का प्रयोग करते हैं और हमारे समाज विज्ञान क्षेत्रों के जितने मित्र यहां पर हैं, प्रो. इन्द्रदेव जी सही बात तो यह कि हम अपने देश की भाषा में नहीं लिखते हैं। कभी उन्हें इंटरव्यू में कहो कि हिन्दी पढ़ाना पड़ेगा। एक लड़की ने कहा कि मेरे गले में खराश होती है जब मैं हिन्दी बोलती हूं। होती होगी अब इसके लिए कोई पेटेंट दवा तो नहीं निकली पर जो एक मानसिकता हमारी होती है या होती जा रही है, इस बौद्धिक मानसिकता के कारण देश की समस्याओं से हमारा ध्यान हटता जा रहा है और जो आज देश में घटित हो रहा है। जैसे एम.टीवी., जी.टी.वी. और हमारे बेदी साहब (कबीर बेदी) की नई बीवी के दो कार्यक्रम देखे। काफी शार्ट स्कर्ट पहनती थीं। लगातार शार्ट स्कर्ट को नीचे खींचती थीं जो कैमरे के कोण में आता था। वह ध्यान आकर्षित कर रही थी कि हम उनकी जंघाओं को देखें। जो झूठा लज्जा का भाव उसमें है, उसकी प्रशंसा करें। आज हो क्या रहा है ? ये किस तरह की संस्कृति आ रही है ? एक उदाहरण बार-बार देना चाहूंगा कि अगर शराब पीना है तो शराब पीने की संस्कृति को समझ लो। आपने अगर जी.टी.वी. और स्टार टी.वी. में शराब के विज्ञापन को देखा होगा लेकिन अब देखें कि कितनी बेरहमी से अच्छी शराब गिलास में गिरायी जाती है। मैंने तो सुना था कि हिन्दुस्तान का पटियाला पेग काफी बड़ा होता है पर टी.वी. पर शराब के विज्ञापन होते हैं, वह पटियाला पैग से भी डेढ़ गुना होते हैं। स्वास्थ्य पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा? और ये बार-बार जानना चाहता हूं कि जो सुरूर हल्का सा आता है, वह शराब से आता है

या जो सुंदरी बगल में खड़ी है, उसके कारण आता है? तो ये प्रश्न ऐसे हैं कि विचार कैसे करें? यह भी कोई हमें बताये। अनुसंधान हम कैसे करें। अभी भाई डॉ. इन्द्रनाथ चौधरी ने चार शोध के आयाम बताये। ये आयाम हुआ करते थे। अब ये भी चले गए। क्योंकि अब तो इल्हाम से भी शोध किया जा सकता है, जो नई-नई चमड़ा तोड़ भाषा रिसर्च में आती है। हम लोग साथ में थे। भारतीय समाज विज्ञान अनुसंधान परिषद् में तो वह चार पेज का प्रस्ताव शोध का ऐसा आता था कि मुझे ऐसा मालूम पड़ता था कि भारत से इसका सम्बन्ध है ही नहीं पर सामान्यजन की जो अंग्रेजी है, उस अंग्रेजी का, किसी का उससे कोई संबंध नहीं है। तो एक बड़ी दयनीय स्थिति है कि हर क्षेत्र में बौद्धिक क्षेत्र में इसमें शक्ति होना चाहिए कि हम आलोचना कर सकें। हम देश के सामने उन प्रश्नों को रख सकें जो मूल प्रश्न हैं, ज्वलंत प्रश्न हैं पर वहाँ पर बौद्धिक दासता उस क्षेत्र में भी आ रही है-जिसे मैं त्रिशंकु संस्कृति कहता हूँ। उस त्रिशंकु संस्कृति में भारतीयता के आयाम बहुत कम बचे हैं। यहाँ महात्मा गांधी और नेहरुजी के विचार बहुत प्रासंगिक होंगे। कुछ मजबूरियां हो सकती हैं अर्थव्यवस्था को एक तरह से चलाने की परन्तु सांस्कृतिक वर्चस्व कहीं बाहर से आये इसके बारे में हमें सोचना पड़ेगा। मैंने कुछ बिन्दु कागज पर लिखे हैं पर मैं बहुत विस्तार से नहीं कहूंगा क्योंकि पूर्व वक्ताओं ने करीब-करीब उन्हीं बिन्दुओं को उठाया है। हालांकि हमारी उनकी कोई चर्चा नहीं हुई थी।

संक्षेप में एक बड़ा प्रश्न हमारे सामने है, वह है लक्ष्य और साधनों की नैतिकता का। उनकी नैतिकता की कसौटी होगी कि वह गांधीजी के मुहावरे में यह निश्चित करें कि हमारी जो योजनाएं हैं, परिकल्पनाएं हैं, उनका कितना लाभ दरिद्रनारायण को मिलता है। तीसरा बिन्दु कि प्रौद्योगिकी मानव के लिए, मानव प्रौद्योगिकी के लिए नहीं। वन डायमेंशनल मेन। एक आयामी आदमी की बात होती है। वह व्यक्ति को एक विशेष दिशा में ले जा रही है-जिसमें शायद वह अपने जीवन के, अर्थ जीवन के मूल्य संस्कार राष्ट्रीय अस्मिता से जुड़े प्रश्न और उनसे पाया जाने वाला आधार है, इनके बारे में सोचता नहीं है और अगर थोड़ा बहुत समझता भी है तो जो आंधी आ रही है, उस आंधी में बह जाता है और कुछ कर नहीं पाता। जो चीज आज की बहस

में आयी है पर जिसे हमें बार-बार दोहराना पड़ेगा कि एक व्यक्ति की केन्द्रीयता जो विकसित हो रही है, उसके स्थान पर हमें सामाजिकता के सम्बन्ध में सोचना है और गांधीजी ने और नेहरू जी ने जो सामाजिक सरोकार स्वीकार किए थे, प्रक्षेपित किये थे, उस तरह के सामाजिक सरोकार हमें स्वीकार करना पड़ेंगे। क्योंकि जो भोगवाद, भिक्षावाद, उपभोक्तावाद देश में आता जा रहा है, वह आज थोड़े से वर्गों को सुख-संतोष दे सकता है पर समाज में विद्रोह की अग्नि इसी उपभोक्तावाद से शुरू हुई, क्यों? आज अमेरिका में आप महँगी घड़ी पहन कर अपन पेंट हाऊस में रहते हैं। जब बाहर जाते हैं तो टाइमेक्स की सस्ती घड़ी पहन लेते हैं। महँगी जैकेट्स, महँगे जूते पहन कर दो-तीन लोग हमला करते हैं। एक घड़ी उतारता है, एक जूते उतारता है और एक जैकेट उतारता है तो ये बहु विज्ञापित चीज है। लुभावनी चीज है। आकर्षित तो करती है पर जब साधन नहीं रहते, तब धीरे-धीरे एक विद्रोह को आम असामाजिक तत्व बना देती है। उन सबसे आज एक विकेन्द्रीकरण के तहत व्यवहार करती है। विकेन्द्रीकरण एक क्षेत्र और सीमाएं निर्धारित करता है पर इस देश में बड़ी मशीन या सीमेंट, कांक्रीट के प्लेट्स शहरों में चले जायें पर मेरा ख्याल है कि कच्ची सामग्री हमारी भौतिक संस्कृति की मिट्टी ही रहेगी और यंत्र चाहिए पर ऐसे यंत्र चाहिए जो छोटे समूहों में पारिवारिक उद्योगों में काम में आ सकें और विकेन्द्रीकरण कुछ इस तरह का हो कि पेट की भूख के लिए कुछ हाथों को काम भी हमारी अर्थव्यवस्था और समाज व्यवस्था दे सके।

और अंतिम बिन्दु में मेरा ख्याल है कि धर्म निरपेक्षता के प्रश्न पर हमने कई जगह गलती की। सबसे बड़ी गलती तो यह है कि धर्म निरपेक्षता को हमने धर्म विरोधी बना दिया है। आस्थाओं में आग्रह होते हैं। सृष्टि के मूल्य होते हैं और चाहे वह इस्लाम हो, हिन्दू धर्म हो, बौद्ध धर्म हो, इन आस्थाओं की शक्ति बहुत अधिक रहती है। सोवियत यूनियन में एक भारतीय दल का नेतृत्व किया था मैंने। वहाँ के रेवोल्यूशन साइक्लो सोसायटी को देखा। वहाँ के लोग कुछ ऐसा दिखाते हैं कि हमारी सोवियत नीति ऐसी है, यह विघटन के पहले की बात है। वह कहते थे कि सेक्युलर सोसायटी धर्म निरपेक्ष सोसायटी में आपका अनिश्वरवादी होना जरूरी है। मैंने कहा देखिए जरूरी है या नहीं, मैं शायद हूं भी पर मैं उस देश का त्याग करूंगा, जहाँ कि जन-जन में आस्था

है, जहाँ जन-जन में राय है। जम्मू-कश्मीर में मैं कुछ साल रहा। वहाँ मैंने देखा कि धर्मों के झगड़े नहीं हुए हैं पर आस्थाओं में आग्रह वहाँ भी हैं। वह जो धर्म है वह व्यक्तियों को जोड़े, नजदीक लाये। जब आप धर्म निरपेक्षता की व्याख्या धर्म विमुखता के रूप में करते हैं तो एक बड़ा उग्र आक्रामक रूप धर्म का आता है और मैं समझता हूँ कि हम पुनर्व्याख्या करें। इस तरह से जो समूहों को पास लाये, समुदायों को पास लाये, धर्मों को पास लाये, मेरा ख्याल है कि एक ओर तो हम धर्म विमुखता की बात करते हैं, दूसरी ओर जो एक सम्मोहन है वोट जीत लेने का, तो हमारी साम्प्रदायिकता आ जायेगी और जिस चीज से मुझे सबसे ज्यादा नफरत है वह ये कि एक मुसलमान चार हिन्दुओं के बीच में आयेगा तो हिन्दू-मुस्लिम, भाई-भाई की बात होगी। मुसलमान जायेगा तो बोलेंगे कि ये आदमी तो अच्छा है और इन पर विस्वास किया जा सकता है। तो ठीक वही होता है कि एक मुस्लिम समूह में कोई हिन्दू पहुँचता है तो ये तो मानसिकता है, दुराव है। मैं समझता हूँ कि उसका विश्लेषण भी होना चाहिए, व्याकरण भी होना चाहिए और यदि हम धर्म विमुखता न बनायें, धर्म निरपेक्षता को तो शायद धर्मों की समझ, रीति रिवाज की समझ, आस्थाओं की समझ कुछ ज्यादा हो सकती है और ऐसा भी इस देश में हो सकता है कि जो दंगे फसाद होते रहते हैं, इस देश में लोग सुख और शांति से रहना भी जानते हैं और गांधी जी की प्रार्थना सभा में, वही तो तिवारी जी ने एक काम बड़ा अच्छा किया है कि मर्यादा पुरूषोत्तम राम को कुछ लोग उठा ले गए थे। गांधी जी के आखिरी शब्द, गांधी जी की समाधि पर भी है—हे राम। पाकिस्तान में एक बड़े शायर हुए हैं जिन्होंने उनको राम के बाद इमामे हिन्द कहा था तो ये समझ हो सकती है और अंध विश्वासों की कोई बात नहीं है क्योंकि परम्परा को मैं देखता हूँ। तो इसका ये मतलब नहीं है कि मैं कहता हूँ कि परम्पराएँ चलती रहेंगी। परम्पराएं तो बदलती हैं। गांधी जी ने कितनी परम्पराएं बदलीं। आखिर जिन्हें हरिजन कहते थे, उन्हें सम्मानीय स्थान किसने दिलाने का प्रयत्न किया और उससे भी ज्यादा आज जो नारीवाद के नारे लग रहे हैं। मैं समझता हूँ कि शायद बता नहीं सकता क्योंकि एक-दो बार मैं कह चुका हूं कि वह किस्सा तोता-मैना, मैना का है परन्तु नारीवादी समाज में सक्रिय रूप से देश के आंदोलन में महिलाओं को जोड़ने का काम

जो गांधी जी ने किया वह परम्परा का पालन नहीं था। एक परम्परा को तोड़ रहे थे और दूसरे न्यायोचित परम्परा बना रहे थे। मैं समझता हूँ कि आज भी प्रासंगिकता है। गांधी जी फैशन के लिए नहीं है। उन्हें ड्राइंग रूम की वस्तु मत बनाइए। उनके विचारों को इतना जटिल और दुरूह मत कीजिए कि लोग समझ न सकें। सामान्य भाषा में ये संदेश यदि जा सके तो मैं समझता हूं कि जो दिशा भ्रम हमें हो गया है और लक्ष्य भ्रष्ट हम होते जा रहे हैं, शायद हमें अपने पद का पता चले।

स्वतंत्र और चिरस्थायी सत्य

● डॉ. इन्द्रनाथ चौधरी

महात्मा गांधी का जन्म 1869 में हुआ था और उसके बीस वर्ष बाद जवाहरलाल नेहरु का। उन्होंने गुजराती में आत्मकथा लिखी सन् 1929 में जब उनकी उम्र 60 वर्ष थी। गांधीजी का उद्देश्य था जो कि उन्होंने प्रस्तावना में लिखा है, आत्मकथा के बहाने सत्य के जो अनेक प्रयोग हुए हैं, मैं उनकी कथा लिखना चाहता हूँ। सत्य के जो अनेक प्रयोग हैं, उनसे उनका तात्पर्य था-आध्यात्मिक प्रयोग । बिल्कुल प्रस्तावना में उन्होंने जो लिखा है, सत्य के इन प्रयोगों को मैं आध्यात्मिक प्रयोग कहता हूं क्योंकि अन्तत: जीवन का जो उद्देश्य था वह था आत्म दर्शन, ईश्वर का साक्षात्कार, मोक्ष। ये सब बातें उन्होंने प्रस्तावना में लिखी है और उन्होंने कहा है कि मेरे ये सारे कार्य इस दृष्टि से होते हैं यानी ईश्वर का साक्षात्कार मोक्ष, आत्म दर्शन। मगर बहुत जल्दी आध्यात्मिकता की बात कहते हुए वे घूम जाते हैं और घूमकर फिर व्यवहारिकता की तरफ चले आते हैं। वे घूमकर बिल्कुल व्यावहारिक बातें, जो बातें एक आदमी एक पॉलिटीशियन, बिजनेसमेन जिस ढंग से बाते करता है, बिल्कुल उस ढंग से बातें कहते हैं। आध्यात्मिकता का मेरा मतलब है नैतिकता, धर्म से मेरा तात्पर्य है नीति और इमीजिएटली जो लेबल है उनका वह ऊपर से नीचे के धरातल पर पहुँच जाता है। नीति और नैतिकता, धर्म की बात कहना शुरू करते हैं। धर्म का अर्थ हम लोग जानते हैं। धर्म जो

अपनी ड्यूटी है, अपने कर्तव्यपालन है, मगर वह कर्तव्यपालन नैतिक ढंग से किया जाये। यह बातें सदियों से इस देश में कही गयीं हैं। इसलिए नीति, सत्य वहाँ पहुंच जाते हैं और फिर कहते हैं कि बड़े तटस्थ निर्भिमान ढंग से, मैं ये सारी बातें आप लोगों के सामने कह रहा हूं। यानी मेरे जो सत्य के प्रयोग हैं, वही मेरी आत्मकथा है।

पंडित नेहरु ने अपनी जो आत्मकथा हैं उसको नाम देना चाहा था, उसका एक उप शीर्षक दिया था, सबसे पहले - इन एन आऊट ऑफ प्रिज्म और फिर उसके बाद पूरा टायटल था। एन आटोबायग्राफिकल नरेट इट विथ म्यूजिक ऑन रिसेंस इवंस इन इंडिया । बहुत बड़ा सा शीर्षक। मगर जो अंग्रेज प्रकाशक था, वह गांधी जैसे ही बड़ा प्रेक्टिकल आदमी था। उसको चेंज कर दिया - जवाहरलाल नेहरु एन आटोबायग्राफी। ये दोनों आत्मकथाएं दुनिया की हर समय की दो महत्वपूर्ण आत्म जीवनियां हैं। गांधी और नेहरु का जो उत्कृष्ट मनोवेग है उसका परिचय ये दोनों आत्मकथाएं देती हैं। अपने आप में ये एकदम स्पष्ट हैं। जो कुछ वह कहना चाहते हैं, उसका कोई घुमाव छिपाव कुछ नहीं है, बिल्कुल स्पष्ट सपाट वह सारी बातें कहते चलते हैं। और दोनों इस दृष्टि से एक जैसी है, परन्तु अपने में बहुत-बहुत अलग कारण स्पष्ट है। नेहरु के चरित्र गठन पर विदेश का प्रभाव था। बचपन में जिस वातावरण में वे पले थे वो देशीय वातावरण था अर्थात् देशीय वातावरण और विदेशी प्रभाव इन दोनों को लेकर उनका चरित्र का निर्माण हुआ था। वे हेरो और केम्ब्रिज में पढ़े थे और अपनी आत्म कथा में लिखते हैं कि जब मैं आया था-आय वाज एक लिटिल प्रीडिश, मैंने बड़ी कोशिश की। मेहता जी, प्रीडिश का अर्थ हिन्दी में क्या हो सकता है। प्रीडिश ही - वाज ए प्रिग, ऐसी बातें हम लगातार करते हैं, प्रिग का मतलब है अपने में बड़ा आत्मभिमानी हैं, जो हल्का है, जिसमें कोई ठोस चीज नहीं है, ऐसे व्यक्ति को प्रिग कहते हैं। वह खुद कह रहे हैं अपने बारे में कि मैं कुछ प्रिग्स सा था और फिर साफ लिखते हैं मेरे मानसिक स्वरूप के गठन पर इंग्लैंड का प्रभाव इतना

है कि मैं पूरे तौर पर उसको सदा समझने लगा हूँ। अब जरा सोचिए, वह व्यक्ति जिसकी उम्र 47 साल होगी क्योंकि उन्होंने लिखना शुरु किया था, 42 साल की उम्र में और जब वह लिख रहे हैं 42 और 47 इसके बीच में जब वह कह रहे हैं कि मेरे ऊपर इंग्लैण्ड का प्रभाव है, मैं इंग्लैण्ड को अपना सगा समझा हूँ। उसके बाद और एक स्थान पर लिखा है, मैं करूंगा वही जो मेरा जी चाहेगा। मैं अपने हृदय की आदतों से मुक्त नहीं हो सकता औरं दूसरे देशों और आम तौर पर जीवन के विवेचन के उपायों और कसौटियों को हटा नहीं सकता जिन्हें इंग्लैण्ड के स्कूल और कॉलेज में पढ़ते हुए मैंने प्राप्त किये हैं। इसलिए मेरा जीवन, संक्षेप में नेहरु जी का जीवन चरित्र भारतीय उपादानों का विदेशी रूप ग्रहण करता है।

दरअसल नेहरु इमोशनली वेस्ट के विऱोध में थे। पश्चिम के प्रति ज़ो उनका विरोध था, वह अनुभूतात्मक था, इमोशनल था, मगर इंट्रेक्चुअली भौतिक दृष्टि से वह वेस्ट के पक्ष में थे। महात्मा गांधी इंट्रेक्चुअली बौद्धिक दृष्टि से वेस्ट के विरोधी थे। वह जानते थे कि वेस्ट के साथ हमारी बराबरी कभी भी नहीं हो सकती। हम अगर वेस्ट का अनुपालन करने लगेंगे तो वह हमारे लिए खतरनाक सिद्ध होगा। वह जानते थे इसलिए लगातार जो वह कह रहे थे कि इंट्रेक्चुअली बौद्धिक दृष्टि से वे वेस्ट की खिलाफत करते थे, परन्तु अनुभूतात्मक तरीके से इमोशनली वे वेस्ट के साथ थे, क्योंकि वे हर मानस के साथ थे। उनके लिए ईस्ट और वेस्ट का कोई मतलब नहीं था इसीलिए गांधी जी कहते थे-मेरे लिए देशभक्ति और मानवता एक है क्योंकि मैं देश भक्त हूँ, क्योंकि मैं मानव और मानवीय हूँ। ये एक दूसरे से अलग नहीं हैं। मैं भारत की सेवा के लिए इंग्लैण्ड और जर्मनी को दुख नहीं पहुचाऊंगा।

आपको मालूम है, वे कहते थे कि हमारा जो सारा कंसेप्ट था, राष्ट्रीयता था, नेशनलिज्म का जो कंसेप्ट था प्रारंभ में, जो कुछ शुरू हुआ था रवीन्द्रनाथ से, महात्मा गांधी से, उससे पहले बंकिमचन्द्र

चट्टोपाध्याय से, वह सारी की सारी अवधारणा दूसरी थी। महात्मा गांधी कहते थे कि ये जो देश को स्वाधीन करने की लड़ाई है, ये दरअसल में शांति को लाने की लड़ाई है। रवीन्द्रनाथ कहते थे कि मेरे लिए राष्ट्रीयता है, वह टेरीटरी नहीं है। मृगमय शब्द का उन्होंने प्रयोग किया था कि मेरे लिए राष्ट्रीयता अर्थात् देश की स्वाधीनता टेरीटरी नहीं है। टेरीटरी प्राप्त हो जाने से मृगमयता आ जाने से स्वाधीनता मिल गई, मैं यह नहीं मानता हूँ। मेरे लिए जो स्वाधीनता है, वह एक आइडिया है, एक विचार है, उस विचार का मैं चाहता हू सम्प्रेषण हो। बंकिम बाबू भी उस तरीके की बातें कह रहे थे। मगर एक बात महात्मा गांधी ने कही थी इनपेरेलिज्म का मेरे जीवन योजना में कोई स्थान नहीं है। ये एक ऐसा मीटिंग प्वाइंट था, दोनों को मिलाने का तत्व था। साम्राज्यवाद एक ऐसा आम शब्द था जिसने दो व्यक्तियों को एक मंच पर लाकर खड़ा कर दिया, नहीं तो दोनों में काफी भिन्नता थी। गांधी जी कंजरवेटिव थे, हालाँकि कंजरवेटिव का क्या अर्थ है, हम आज बता नहीं सकते, आज सुबह इंद्रदेव जी ने कहा मैं थोड़ा सा चौंक गया था, जब उन्होंने कहा कि गांधी जी के सारे विचार पोस्ट मॉर्डनिस्ट विचार है। मैं सोचने लगा कि पोस्ट मॉर्डनिस्ट से का क्या तात्पर्य है? पोस्ट मॉर्डनिस्ट से उनका तात्पर्य है, जो इस देश में हुआ है, हम सब लेखक, विचारक अपनी जड़ों की खोज में लगे हुए हैं। लोग जो हैं औद्योगीकरण के विरोध में हैं। अब जरा सा सोजिए 1947 में जव हमें अपनी स्वाधीनता मिली थी उससे पहले दो विचारधाराएं साहित्य में दिखाई पड़ती थी, एक और एक रूमानी विचारधारा, सौंदर्य की खोज, महानदी में और प्रकृति में और एक दूसरी विचारधारा उसके साथ थी, वह थी सामाजिक यथार्थ की विचाधारा जो मार्क्सवादी प्रभाव स्वरूप हिन्दी और सारी भाषाओं में थी। इन दो विचार धाराओं के साथ हमें आगे बढ़ते-बढ़ते स्वाधीनता मिल गई 1947 में और हमने सोचा कि रामराज प्राप्त हो जायेगा, परन्तु उसके बाद 50 आया फिर 51, 55, 56 और 57 हमने देखा, कुछ नहीं हो रहा। जो चीजें हो रही

हैं, वह हमारे मन के अनुकूल नहीं हो रही हैं। भ्रष्टाचार धीरे-धीरे पनपने लगा। हमारी इच्छाएं पूरी नहीं हुई। हमारी आशाएं भंग होने लगी, ऐसी स्थिति में फिर दो घटनाएं घटीं। सामाजिक यथार्थ जो है उसने क्रांति का स्वर ले लिया एक विद्रोह का, एक आंदोलन का स्वर हमारे सामने उपस्थित हुआ और दूसरी जो है वो जीवन, इस जीवन को जीने के लिए हम अभिशप्त हैं। इससे निकलने के लिए कोई रास्ता नहीं है, चारा नहीं है। इस तरह की एक अस्तित्ववादी दृष्टि भी हमारे साहित्य में फैली और इन दोनों को लेकर आगे बढ़ते-बढ़ते 10 साल मूवमेंट का, 1970 का आया और 1970 के मूवमेंट के बाद हमने देखा, चीजें तो बदलीं नहीं, स्थितियाँ बदली नहीं, स्थितियाँ और भी बद से बदतर होती रहीं, मगर कोई क्रांति नहीं आयी, कोई आंदोलन नहीं हुआ, किसी प्रकार की चीज नहीं आयी, जिससे हम कह सकते कि सारे के सारे देश में एक क्रांति आ गई, एक आंदोलन आ गया जो आलोक धनवा कह रहा था, नेताजी के लिए, ये मेरी कविता नहीं है, ये बंदूक दागने की गोली है, वही सब कुछ नहीं हुआ क्योंकि उस वक्त एक बहुत बड़ा शत्रु हमारे देश में प्रवेश कर चुका था। पीछे के दरवाजे से और वह शत्रु था, कंजूमर कल्चर, उपभोक्ता संस्कृति जिसने कहना शुरू किया कि आपको क्या करना है, आपको कौन सी किताबें पढ़नी है, आपको कौन सा टूथपेस्ट इस्तोल करना है, आपको कौन सा साबुन इस्तेमाल करना है? पूरे हमारे व्यक्तित्व पर वह छा गया। वह छा गया था रूस के व्यक्तित्व पर भी। सोवियत रूस के पतन का जब इतिहास लिखा जायेगा बड़े-बड़े अक्षरों में 20-25 साल के बाद तब उसमें लिखा जायेगा बड़े अक्षरों में कि सोवियत रूस के पतन का मूल कारण है कंजूमर कल्चर। मगर हम पर उसका प्रभाव उतना नहीं हुआ, उतना इसलिए नहीं हुआ कि उससे पहले हमारे देश में गांधी जैसे लोग पैदा हो गये थे, जिन्होंने हमें सरल जीवन का रास्ता बताया था, जिन्होंने बताया था कि सब कुछ छोड़ना ही जीवन में नायक बनने की तैयारी है।

हमारे देश में नायक कौन है, हमारे देश में ऐसे व्यक्ति को हम नायक कहते हैं जो सब कुछ छोड़ चुका है, राम इस देश के नायक हैं, उसने सब कुछ छोड़ दिया था। वह कह सकता था अपने पिताजी से कि मैं नहीं जाऊंगा। आपने किसी को कोई वचन दिया उसका मतलब यह नहीं कि मैं उस वचन से प्रतिबद्ध हूँ। मेरा आज कालोनेशन होना ही है, परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। इसलिए वह देश के नायक हैं। हमारे देश के नायक भगवान बुद्ध हैं। भगवान महावीर हैं। सम्राट अशोक हैं और बीसवीं शताब्दी का नायक वह जिसकी बात हम आज कर रहे हैं। जब हम लोग 1947 में मध्य रात्रि में स्वाधीनता का जश्न मना रहे थे, वो व्यक्ति कलकत्ते की गलियों में घूम-घूमकर, वह लोग जो सांप्रदायिक दंगों में इंजोर हो गये थे उन लोगों की वह मरहम पट्टी कर रहे थे। वह हमारा नायक है, जो ऊपर कोई वस्त्र नहीं पहनता था, नीचे की जो धोती थी; वह आधी होती थी, घुटने के ऊपर होती थी। अगर आप जायें कभी अहमदाबाद उनके आश्रम में तो आपको तीन चीजें दिखाई देंगी। एक तो चश्मा, एक जो है घड़ी और तीसरा चप्पल। इसके सिवाय उनके पास कुछ नहीं था। वह नायक थे इस देश में। सचमुच आम जनता जो है, जो गरीब जानता है, जिसने पढ़ाई नहीं की है, परन्तु जिसके पास पढ़े-लिखे से चार गुना बुद्धि ज्यादा मौजूद है। वह व्यक्ति जो है इस देश को चलाता है। वह व्यक्ति जानता है, कौन इस देश का नायक बन सकता है। गांधी जी कंजरवेटव दूसरी दृष्ट से थे मैं विदिन फोर्स कंजरवेटिव कह रहा हूँ। कंजरवेटिव को मैं खराब दृष्टि से लेता नहीं, मगर इतिहास की बहुत ही प्रगतिशील घटना को उन्होंने प्रभावित किया था, और वह था हमारा स्वाधीनता आन्दोलन। गांधीजी ने इस शताब्दी में हमारे जीवन पर विज्ञान का जो प्रभाव है, जो औद्योगिक क्रांति है, जो यंत्र युग है, नये अनुयुग का उन्होंने विरोध किया। अपना जो हिन्द स्वराज उन्होंने 1910 में लिखा था, उसमें इन सब चीजों के विरोध की बात की थी उनका विचार था गाँव का सरल जीवन और घरेलूं उद्योग, नेहरु नि:संदह प्रोग्रेव थे,

प्रगतिशील थे, वे इतिहास के साथ झगड़ते नहीं थे। वे इतिहास की धारा के साथ आगे बढ़ना चाहते थे इसलिए जब इस देश में ओरिएंटलिस्ट आए, प्राक्षविद आये और प्राक्षविद ने आकर जब हमारा साहित्य देखा, हमारा दर्शन देखा, हमारे प्राचीन गौरव को देखा तो उन्होने चिल्ला-चिल्ला कर कहा - इंडिया हेड ए ग्लोरियस पास्ट। मगर इन्हीं ओरिएंटलिस्ट ने कहा-इंडिया डज़न हेड ए प्रेजेण्ट। इंडिया को अपना प्रेजेण्ट अगर बनाना है, अपना वर्तमान यदि बनाना है, उसे पश्चिम में जाना पड़ेगा। उसके बाद धीरे-धीरे हमारे देश में जो अवधारणा बन गई, वेस्टर्ननाइजेशन इज मार्डनाइजेशन, जब तक आप वेस्ट की तरफ नहीं जायेंगे, वेस्टर्न नहीं बनेंगे, तब तक आप माडर्न नहीं बन सकते। मुझे बताइए अगर आप, मैं आपसे यह सवाल पूछूं कि मॉर्डनिटी की आधुनिकता की एक विशेषता आप मुझे बता दीजिए, जो भारतीय है। एक भी विशेषता जो, आधुनिकता की भारतीय है, मुझे नहीं बता सकते। जो भी विशेषता आप बतायेंगे वही वेस्टर्न है, विदेशी है। आप जानते हैं भीमसेन जोशी हर वर्ष या दो वर्ष में एक नया राग जो हैं, वह आविष्कार करते हैं, अमजद अली हल साल एक नया राग आविष्कार करते हैं। हम उनको कभी नहीं कहते मॉडर्न इंस्ट्रूमेण्ट प्लेयर, मॉडर्न सिंगर क्योंकि हमारे यहां मॉर्डनिलटी की व्याख्या दूसरी है। हम जब पोस्टमार्टम शब्द का प्रयोग कर रहे हैं, उसका यह मतलब नहीं कि इससे पहले जो कुछ हुआ है जो अतीत के सारे आदर्श हैं, विचार पद्धति है, उसको नकारकर हम नई विचार पद्धति आपके सामने नहीं ला रहे हैं। विदेश में ऐसा होता है। मॉर्डनिलटी का मतलब है, जो कुछ अतीत है, जो कुछ उससे पहले है उसका खण्डन और नये का आगमन, हमारे देश में ऐसा नहीं होता, हम सिर्फ विकल्प तैयार करते हैं। एक विकल्प उसके बाद दूसरा विकल्प, उसके बाद तीसरा विकल्प, उसके बाद एक चौथा विकल्प, इसलिए हमारा जो मॉडर्न, जो पोस्ट माडर्निज्म है, वह जो उत्तर आधुनिकता है, वह उत्तर आधुनिकता अतीत को

काटकर नहीं है। अतीत के साथ जुड़कर है।

हम इतिहास के साथ चलना चाहते हैं, वह इतिहास जिसकी व्याख्या वेस्ट करती है। जो घटनाएँ घट चुकी हैं, हमारे देश में, इतिहास की यह व्याख्या नहीं है। हमारे देश में इतिहास की व्याख्या है, घटनाएं लगातार घटती रहती है, इसलिए हमारे यहाँ इतिहास का मतलब यह नहीं है कि एक लीमियर गति, हमारे यहाँ इतिहास का मतलब है एक जो हैं सर्कुलर गति, इसलिए वह एक लीमियर इतिहास के साथ चलते हैं उसके साथ झगड़ते नहीं हैं। विज्ञान के गलत प्रयोग के खिलाफ हैं, मगर मनुष्य की विस्तार की शक्ति में आनंदित होते हैं। उनका सोचना है कि मानव जाति की मुक्ति के लिए इसका प्रयोग किया जा सकता है और इस प्रक्रिया में सहयोग देना वह अपना कर्तव्य समझते हैं। मैं यह बात इसलिए कह रहा हूँ कि डिस्कव्हरी ऑफ इंडिया में एक जगह उन्होंने कहा है, बिल्कुल उसी तरह से जिस तरह से इंडोलॉजिस्टों ने कहा था-इंडिया हेड एक ग्लोरियस पार्ट, बट ही डजन हेव ए प्रेजेंट? नेहरु भी यह कहते हैं - फॉर प्रेजेंट इंडिया, विल हेव गो टू द वेस्ट? मगर उनकी दृष्टि दूसरी थी। भारत के प्रति उनका प्यार था, वह सोचते थे, गलत तरीके से सोचते थे कि भारत के विकास के लिए जरूरी है, साइंटिफिक टेम्पर और वह सोचते थे कि यह साइंटिफिक टेम्पर हम केवल विदेश से ला सकते हैं और यह बहुत भारी गल्ती हो रही थी जो कि महात्मा गांधी चाह रहे थे। महात्मा गांधी का डायलेक्टिस क्या था? उनका सिर्फ यह था कि किस ढंग से मॉर्डनिलटी और ट्रेडीशन को वह मिला सकें। उनकी कोशिश थी कि आधुनिकता जो पश्चिमी आधुनिकता है और जो भारतीय परम्परा है उसको हम कैसे मिलाएँ? उनके सारे के सारे जो सिद्धांत हैं, आप देखेंगे मिलाने के सिद्धांत हैं। नानवायलेंस का अर्थ आप देखिए। सत्याग्रह का अर्थ आप देखिए। सत्याग्रह का मतलब यह नहीं कि जिसके लिए हम सत्याग्रह कर रहे हैं उसके प्रति हमारे मन में कोई मानसिक दृष्टि से विरोध है। हम चाहते

हैं उसका मन बदल जाये, ह्यूमन परिवर्तन हो। नान वायलेंस का भी यह मतलब नहीं, जो वायलेंट करता है, जो हिंसा करता है, उसके साथ मेरी कोई शत्रुता है। मैं चाहता हूँ कि जो हिंसा करता है,उसके साथ मैं किस ढंग से जुड़ सकूं और उसके हृदय को बदल सकूं। इसलिए यह जो डायलेक्टिक का बड़ा महत्वपूर्ण अर्थ है महात्मा गांधी के लिए। इसलिए महात्मा गांधी लगातार कोशिश कर रहे थे कि परम्परा और आधुनिकता को कैसे मिलाएँ? पंडित नेहरु समझ नहीं सके। जब समझ पाये, तब बहुत देरी हो चुकी थी।

ऐसी दो विरोधी विचारधारा वाले व्यक्तियों ने राजनीतिक पार्टनरशिप कैसे स्वीकार कर ली? यही प्रश्न है कि दोनों बिल्कुल विपरीत विचारधारा वाले हैं, मगर राजनीतिक पार्टनरशिप उन्होंने इसलिए स्वीकार की कि दोनों के दोनों साम्राज्यवाद के खिलाफ थे। दोनों ही भारतीय संग्राम के प्रति प्रतिबद्ध थे। उसके प्रतिभागी के रूप में दोनों एक दूसरे के साथ जुड़ गये थे। नेहरु, गांधी के जाति भेद के विरुद्ध थे। दक्षिण अफ्रीका के आंदोलन के बारे में सुना था और मन ही मन प्रसन्न हुए थे। उनके मन में गांधी के प्रति एक भक्ति पैदा हो गई थी। भारतीयों को मानवीय और समान अधिकार दिलाने के बाद उन्होंने सुनी थी। उस समय नेहरु के लिए गांधी का जो दर्शन था, अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन महत्वपूर्ण नहीं था उनके लिए। गांधी के सामाजिक उन्नति के जो विचार थे इसने भी नेहरु को प्रभावित नहीं किया था। वे गांधी के साहसिक कार्य से प्रभावित थे। उनको चुनौतियों का सामना करते देखा था। बस उनकी पर्सनालिटी से, व्यक्तित्व से वह प्रभावित थे। जैसे ही विचारों की बात आती थी, वह विरोध करना शुरु करते थे, परन्तु गांधी के व्यक्तित्व के सामने वह झुक जाते थे। एक ऐसे संत राजनीतिक दृष्टि से प्रभावपूर्ण उदार व्यक्तित्व के प्रति नेहरु आकर्षित हो गये थे। नेहरु के लिए गांधी नायक बन गये थे। वह पर्सनालिटी डिवोशन नेहरु को गांधी के साथ जोड़े रहा। गांधी की सम्पूर्ण निस्वार्थता,

उनकी पूर्ण निर्भयता, निर्धनतम किसानों और तिरस्कृत अछूतों के साथ उनका पूर्ण तादात्मय होना है।

जीवन की सरलता, सौंदर्य और दयाशीलता ने नेहरु को आकर्षित किया था। जब गांधी को देखते थे अमरण अनशन करते हुये तब नेहरु जो है मन ही मन उनके प्रति गद्‌गद् हो जाते थे। उनको ऐसा लगता था कि अपना सारा शरीर देकर उनको बचाओ और इसके फलस्वरूप साल बाद नेहरु ने डिस्कव्हरी ऑफ इंडिया लिखी। वस्तुत: गांधी जी के प्रभाव से यह भारतीय, भारत के प्रत्यावर्तन की कहानी है नेहरु का भारतोन्मुख होना। गाँधी के प्रभाव के बिना यह भारतोन्मुखता संभव नहीं थी। वह प्रसिद्ध वकील थे, प्रसिद्ध वकील जिस तरह से उन दिनों किया करते थे। बिल्कुल वो काम वह किया करते थे, उदार नैतिक, राजनैतिक, पेंट सूट पहनकर आना। टाइयाँ लगाकर बहुत अच्छी क्रीज और सिगार पी रहे हैं। मीटिंगों में आ रहे हैं। मीटिंगों में देश की दुर्दशा की बात हो रही है, उसके बाद जो है, शेम्पेन पिया जा रहा है और यह सब पंडित नेहरु कर सकते थे, परन्तु आत्म चरित्र, उसके परिणामस्वरूप विकास के पथ पर इससे अधिक अग्रसर नहीं हो सकता था। भारतीय उपादानों द्वारा निर्मित विदेशी मूर्ति अनाविष्कृत ही रह जाती है। इस देश के इतिहास में ऐसी हजारों मूर्तियाँ हैं, जो भीड़ में को जाती हैं और उस ढंग से नेहरु खो जाते हैं, किन्तु वह तो हो नहीं सकता ता। घटना की प्रवाह धारा जो है, वह दूसरी तरफ बहती थी। महात्मा गांधी का प्रभाव एक ओर और दूसरी ओर असहयोग आन्दोलन ने नेहरु के चरित्र पर आघात किया था जैसा मैंने बताया उसको मैं फिर दोहराता हूँ।

गांधी जी का साधु चरित्र, उनका जीवन और चिंतन, उनके साहस और त्याग के नाना उदाहरण हैं। सारे भौतिक पदार्थो का त्याग भारतीय आत्मा का परिचय देता है जो लाखों-करोड़ों किसानों के मन के अनुकूल हैं। यह प्रभाव नेहरु पर पड़ा था और दूसरा असहयोग आन्दोलन जिसके

बारे में उन्होंने आत्म जीवनी में लिखा है। सन् 1919 में रौलेट एक्ट के विरुद्ध आंदोलन के लिए सत्याग्रह सभा की स्थापना हुई। यह प्रस्ताव जब मैंने पहली बार समाचार पत्रों में पढ़ा तब मेरे मन से काफी बोझ कम हो गया आखिरकार पथ की खोज मिली, यह स्पष्ट सरल पद्धति शायद काम में लग जाये। मैं उत्साहित हो उठा और तत्काल सत्याग्रह सभा में योगदान के लिए संकल्प किया। अहिंसात्मक मार्ग के सिवाय और कोई दूसरा मार्ग नहीं है। नेहरु यह समझ गये थे, अब जो नेहरु की सुनिश्चित पृष्ठभूमि थी, जो उनका सुनिश्चित रास्ता था, वह सुनिश्चित रास्ते से हटकर अनिश्चित जलधार में वह उतर गये और उस दिन नेहरु को वह जलधार भारत की ओर ले आयी। यह भारत अभिमुखता की बात ही उनकी भारत की कहानी की विषयवस्तु है। गांधी के द्वारा उनका पुनः रूपांतरण हुआ। एक रूपांतरण जब हेरो और केम्ब्रिज में गये थे, जो भारत का उपादान है, उसके द्वारा एक विदेशी मूर्ति की प्रतिष्ठा हुई थी। एक दूसरा जो रूपांतरण हुआ, इस 47 साल में और उसके बाद और 10 साल याने 57 साल तक उन्होने डस्कव्हरी ऑफ इंडिया लिखी थी। 57 साल में, 57 साल तक पहुंचते-पहुंचते फिर गांधी के प्रभाव स्वरूप उनका एक और रूपांतरण हुआ। नेहरु ने यह भी देखा कि गांधी का मानव मूल्यों के प्रति जो दृष्टिकोण है, उनका अपना दृष्टिकोण है। यद्यपि गांधी जी उसको अलग ढंग से व्याख्यायित करते हैं । मैंने यह भी देखा कि किसानों के प्रति गांधी जी का जो डिवोशन है, वह उनका अपना डिवोशन है, उन दोनों में कोई फर्क नहीं है। तीसरी चीज उन्होंने देखी कि गांधी जी का हिन्दू, मुस्लिम एकता के लिए जो आग्रह है, वही नेहरु का भी आग्रह है। खासकर जब उन्होंने देखा कि जो बरतानिया सरकार है, दोनों को एकॉनामिकली उसी ढंग से एक्सप्लायट कर रही है और दोनों को एक जैसे ह्यूमिलेट कर रही है। एक थे मेन अफेक्शन, दूसरे थे मेन ऑफ थाट्स और इसीलिए दोनों के बीच सहयोगिता का प्रश्न बड़ा कठिन था, परन्तु दोनों एक दूसरे के साथ जुड़ने के लिए बाध्य भी थे। मैं

इस शब्द का इस्तेमाल करूँगा कि दोनों के बीच में सहयोग का प्रश्न बड़ा कठिन था परन्तु दोनों एक दूसरे के साथ जुड़ने के लिए बाध्य थे। इसीलिए उन्होंने आत्म कथा में, मैं दो उदाहरण दूंगा, जिस ढंग से वह गांधी जी से प्रभावित होते थे, एक था नमक आंदोलन, अब जरा सा सोचिए, सुबह भी यह बात उठी थी कि सर्वोदय की बात, सारा का सारा जो सर्वोदय का कंसप्ट है, वह भक्ति का कंसेप्ट है। भक्ति जब आयी उससे पहले हम लोग सुनते थे, वेद श्रुति है उपनिषद में जो है, गुरू के निकट बैठकर गुरू से सुन रहा हूँ। अचानक पूरी का पूरी शिफ्टिंग शुरू हो गई। हमने सुनना बंद किया। हमने सुनने के स्थान पर बोलना शुरू किया और ये बोलने का सिलसिला दक्षिण में आनवार कवियों से शुरू हुआ और उसके बाद बसवना वगैरह जो कर्नाटक के भक्त कवि थे, उन्होने बोलना शुरू किया। उन्होंने अपनी वाणी को कहा, वचन और पूरी की पूरी जो. भक्ति का प्रयोग है, हमारी कविताओं में, सूर-तुलसी, मीरा कहें, सुर वह जो कहना है, यह बोलने की प्रक्रिया शुरू हुई । भक्ति ने हमें क्या दिया? जोड़ा, ईश्वर के साथ। एक जोड़ने का, शेयरिंग का। बोलने की प्रक्रिया शुरू हुई। अचानक हम लोग जो चुप थे, अब हम ईश्वर को जो है, मंदिरों से निकालकर अपने घर में ला आये, उनको अपने परिवार का अंग बना लिया । भक्ति जो थी वह ईश्वरीय का गृहस्थीकरण था। अब हम उसके साथ गाने लगे।

उसके साथ सब कुछ करने लगे और कौन सी भाषा का उपयोग करना हमने शुरु किया, हमने संस्कृत को त्याग दिया। हमने प्राकृत को त्याग दिया और हमारी जो भाषा थी जिस भाषा में हम बोलते थे उस भाषा का प्रयोग शुरु हुआ। एम्पावरिंग ऑप द लेंग्वेज जो भक्त कवियों ने किया और कहा कि कोई भी आदमी छोटा नहीं है, जात-पाँत के ऊपर जो सबसे पहले आघात हुआ था, इस देश के इतिहास में वो भक्त कवियों ने किया था। सर्वोदय का जो पूरा सिलसिला है, वो वहाँ से शुरू होता है। नेहरु के सामने दो इमेज थीं। एक तिलक के

द्वारा दी गयी शिवाजी की इमेज थी। शिवाजी को बिम्ब मानकर देश में स्वाधीनता का आंदोलन शुरू किया जाये। सोचा परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। वो भक्त कवियों के पास चले गये और भक्त कवि जिस तरह से छोटी-छोटी दैनंदिन इस्तेमाल की जो वस्तुएं हैं उनको लेकर जो ईश्वर की गाथाएं कहते थे, वो सारी चीजें वो ले आए। मसलन उनको लेकर जो ईश्वर की गाथाएं कहते थे, फकीर कहता क्या था– चुनरिया चादर। इन सब चीजों को लेकर वह ईश्वर की बात कर रहा है, दर्शन की बात कह रहा है। इन्होंने भी दो छोटी-छोटी चीजें उठा लीं–नमक, चरखा। बहुत छोटी चीजें हैं और इन दो छोटी चीजों को लेकर देश में उन्होंने आन्दोलन शुरू कर दिया और वह आन्दोलन किस तरह से सर्वव्यापी आन्दोलन हो गया है। नेहरु उसका उल्लेख अपनी आत्मकथा में करते हैं। केवल नमक सत्याग्रह से कुछ हो सकता है, नेहरु को इसमें विश्वास नहीं था, वह कहते हैं हम चकित थे सिर्फ नमक के साथ राट्रीय आन्दोलन में हम कैसे फिट हो सकते हैं। मैं समझ नहीं पा रहा हूं। लार्ड डिरेबियन को नमक सत्याग्रह से पहले 11 प्वाइंट का एक स्मारक दिया गया था। नेहरु ने तब कहा था कि राष्ट्रीय और सामाजिक सुधारों के लिए इस तरह की सूची बनाने की क्या जरूरत? जब हम स्वाधीनता की बात कर रहे हैं, क्या गांधी जी स्वाधीनता से यही अर्थ लेते हैं, जो हम दे रहे हैं अथवा गांधी जी की कोई दूसरी भाषा है, इस पर ध्यान दीजिए।

क्या गांधी जी की कोई दूसरी भाषा है, परन्तु दांडी यात्रा की आशीतीत सफलता ने नेहरु की सारी आशंकाओं को तोड़ दिया। गांधी की अहिंसात्मक टेक्नीक की आशातीत सफलता ने नेहरु को अभिभूत कर दिया। नेहरु को लगा, अचानक नमक एक रहस्यात्मक शब्द बन गया है। एक शक्ति का प्रतीक बन गया है। उन्होने कोर्स में लिखा है– जब हमने देखा कि लोगों में उत्साह उमड़ रहा है और नमक बनना जंगली आग की तरह चारों तरफ फैल रहा है तो हमें कुछ शर्म महसूस

हुई क्योंकि जब गांधी जी ने इस तरीके की तजबीह पर पहले पहल रकी थी तब हमने उसकी कामयाबी पर शक किया था। हमें ताज्जुब होता था कि इस व्यक्ति में लोगों पर असर डालने और उनको संगठित रूप में काम करवाने की कितनी अद्‌भुत सूझ है। अगेन एण्ड अगेन, वह जो पर्सनैलिटी है, छोटे शरीर में कोई वस्त्र नहीं, आधी धोती। वह व्यक्ति लगातार उससे प्रभावित हो रहा है, मिसमिनराइज हो रहा है। ऐसा लगता है कि उसके जादुई व्यक्तित्व से वह अपने को अलग नहीं कर सकता और ये टू वे कॉमिनेशन, आज देश में टू वे कॉमिनेशन खत्म हो गया है। हम देश के बारे में नहीं सोचते हैं। सोचते हैं, किस तरह से विलय हो। इसके बारे में हम आप सोचते नहीं हैं, हमने कभी नहीं सोचा कि कांक्रीट लिस्ट जो हैं, उसको राजनीतिक आदर्शों से बिल्कुल अलग रखना चाहिए। हमने नहीं सोचा। हमने नहीं सोचा कि जो थ्री लेंगवेज फार्मूला है वह कांक्रीट लिस्ट का फार्मूला है। उसका सारे देश को पालन करना पड़ेगा। चाहे कोई भी सरकार आए, हम ऐसा नहीं सोचते हैं। कुछ जो हमारे सिद्धांत हैं, पॉलिसी है, वह कांक्रीट पालिसी है। देश की पालिसी है। हम यह नहीं करते हैं । जैसे ही सरकार बदलती है, सारी पॉलिसीज़ बदल जाती है । क्योंकि शो बड़ा अहम् हो जाता है और इस शो पर गांधी ने लगातार आघात किया। यह जो टू वे कॉमिनेशन है, इस शांतिपूर्ण ढंग से दो तरफा संलन व्यवस्था से नेहरु-गांधी विवाद का अंत हुआ।

एक दूसरी घटना मैं आप लोगों के सामने रखूंगा । बहुत ही काव्यमय और नाटकीय ढंग से नेहरु अपने जीवन चरित्र में अपने दुख दर्द को प्रकट करते हैं। 4 मार्च, 1931 को गांधी जी पेक्ट हो गये थे, उसका वर्णन वह कर रहे हैं अपनी आत्मकथा में। 4मार्च की रात को, आधी रात तक गांधी जी के वाइसराय भवन से लौटने का इंतजार कर रहे थे। वह रात को कोई दो बजे आए। हमें जगाकर कहा कि समझौता हो गया है। हमने मसविदा देखा। धारा नम्बर दो को देखकर

मुझे जबर्दस्त झटका लगा। वह संघर्षण आदि के बारे में थी। मैं उस समय कुछ नहीं बोल सका। हम सब सो गये मगर क्या नेहरु सो पाये थे, उन्होंने लिखा है कि धारा नम्बर दो से लगा कि हमारी स्वाधीनता खतरे में है। क्या इसलिए हमारे लोगों ने एक साल तक बहादुरी दिखाई। क्या हमारी बड़ी-बड़ी जोरदार बातें और कामों को खत्म करने का यह तरीका था? क्या कांग्रेस का स्वाधीनता प्रस्ताव और 26 जनवरी की प्रतिज्ञा इसलिए ली गई थी? ये सब वह लिख रहे हैं, अपनी आटोबायग्राफी में। उस रात को वे सोये नहीं थे। वे सोच रहे थे और सोचकर वह लिख रहे थे। इस तरह के विचारों में डूबा हुआ मैं मार्च की उस रात भर पड़ा रहा और मैं दिल में ऐसी शून्यता महसूस करने लगा कि मानों उसमें से कोई कीमती चीज सदा के लिए निकल गई हो और उसके बाद वो दो लाइनों को, जो टी.एस.एलिएट की कविता है, उसकी पंक्ति उद्धत करते हैं–दिस इज ए वे द वर्ड एण्ड नाट बी द बैन बट हीज ए विम्पर। इसका बहुत ही गंदा अनुवाद मैंने किया है। इस तरह यह दुनिया खत्म होती है। एक धमाके के साथ नहीं, मगर पिनपिनाहट में यह जो विराटवेत्ता की बात कह रहे हैं। 4 जनवरी, 1931 को विराटवेत्ता केवल नेहरु की नहीं थी बल्कि उसमें पूरे देश की केन्द्रीय समस्या थी। सन् 1932 में इस समझौते को स्वीकार करने के बाद प्रेमचंद जी ने **कर्मभूमि** लिखा था। आप लोग याद कीजिए कर्मभूमि की विषय वस्तु। उस पर समझौता होता है, परन्तु प्रेमचंद भी उस खिन्नता से अपने को मुक्त नहीं कर पा रहे थे। उस रिक्तता में फँसे थे वे जिस तरह से नेहरु थे और उसका परिणाम ये हुआ कि सन् 1936 में उस रिक्तता को वाणी देने के लिए उन्होंने **गोदान** लिखा। गोदान वो 1936 में लिख रहे हैं, जब सन् 1936 में नेहरु आटोबायग्राफी लिख रहे थे। दोनों रिक्तता को वाणी दे रहे हैं। याद कीजिए, गोदान में हरेक का हृदय परिवर्तन हो जाता है, जैसा कि गांधी जी चाहते थे परन्तु हृदय परिवर्तन के बाद भी आप ट्रेजडी को रोक

नहीं पाते। चोरी करता है, एक छोटी सी चीज की आस लगाकर एक गांव की आस लगाकर। यह रिक्तता पोलीटिकल लाइफ में नहीं थी। सारे देश में वह रिक्तता फैली हुई थी। ये गांधी इन विन पेक्ट के बाद राउंड टेबल कान्फ्रेन्स होती है और एक बार फिर नेहरु उनके मेथड में और ट्रेजडी में, उसका पक्ष लेने लगते हैं।

1936 में लखनऊ कांग्रेस, 1937 में फैजपुर में और नेहरु वहाँ पर अपना सोशलिस्ट डाक्यूमेंट देते हैं। गांधी जी उसकी खिलाफत नहीं करते। हालांकि गांधी जी का समाजवाद और स्वराज्स की धारणा अलग थी। दोनों में कापी पत्रों के आदान-प्रदान हुए हैं। मेरे पास दो पत्र हैं। एक 11 जनवरी 1928 को नेहरु ने गांधी को एक पत्र लिखा था उसमें उन्होंने कहा था आपके **यंग इंडिया** में प्रकाशित निबंधों और आत्म चरित्र को पढ़ने के बाद मैं इस नतीजे पर पहुंचा था कि आपसे मेरे विचार कितने अलग हैं, आप अपने निर्णयों में बहुत जल्दबाजी करते हैं मेरा राजनीति के साथ कोई संबंध नहीं है परन्तु जो कुछ अखबार में पढ़ते हैं दोस्तों से सुनते हैं कि कोई अगर इस प्रकार का विरोध कर जाये तो यह राजनीति में उस दल के साथ रह ही नहीं सकता। यह हम सुनते हैं और नेहरु का विरोध देखिए, प्वाइंटेड विरोध कर रहे हैं, कहते हैं बहुत जल्दबाजी करते हैं। किसी भी नतीजे पर पहुंचने पर आप किसी भी छोटे से साक्ष्य के आधार पर ओव्हर उत्सुक होकर उसे सिद्ध करने लगते हैं। पश्चिमी सभ्यता के बारे में आपकी धारणा काफी हद तक गलत है और उसकी कमियों पर बहुत ज्यादा गुरुत्व आरोपित करते हैं। इसके जवाब में 17 जनवरी, 1928 में गांधी जी लिख रहे हैं कि हमारे बीच में पट भी नहीं सकती है क्योंकि गांधी जी व्यक्तित्व ऐसा है, मैं नहीं समझता कि जल्दी पढ़ लूं उसको, नेहरु का व्यक्तित्व था जब मैंने वह देखा था, एटनबरो का नेहरु, जब 1946 में वह कलकत्ता गये थे, दंगा हो रहा था और गांधी जी ने वहां अनशन कर दिया था। वह किसी मकान की छत पर से उतरकर

किसी आदमी को थप्पड़ मारते हैं और थप्पड़ मारकर जो है, निकल आते हैं। मैंने सिर्फ एक दफा गांधी जी को देखा था जब मेरी उम्र 10 साल थी। 1946 में मेरे पिताजी संस्कृत के प्रथम प्रोफेसर थे। दिल्ली यूनिवर्सिटी में नरेन्द्रनाथ चौधरी। वो 1926 में दिल्ली आये थे। मुझे मालूम नहीं क्या कारण था। 1946 में उन्होंने कहा चल बेटे गांधी जी से मिलकर आते हैं। हम लोग चार भाई थे, परन्तु बाकी तीन भाई कहीं नदारद थे, कहीं खेलने चले गये होंगे। मुझे वह ले गये। मेरी उम्र 10 साल थी। गांधी जी कालोनी में थे। वे बैठे बीस-पच्चीस मिनिट तक । गांधी जी से बात करते रहे। मुझे सिर्फ याद है कि एक छोटा सा इतना सा, एक व्यक्ति जो पैर पीछे करके जैसे योगासन में पैर पीछे रखकर बैठते हैं, उस ढंग से बैठे हुए हैं और फिर पिताजी चले आये केवल यही एक स्मृति में गांधी जी की बात मुझे याद है।

गांधी जी लिख रहे हैं कि हमारे बीच अन्तर इतना अधिक और मूलभूत है कि मीटिंग ग्राउण्ड दिखाई नहीं पड़ता। मैं अपना दुख तुमसे छिपा नहीं सकता कि तुम्हारे जैसा वीर और विश्वासी सहचर मुझे खोना पड़ेगा। इतना योग्य और ईमानदार जैसे कि तुम हमेशा रहे हो। मगर एक उद्देश्य की पूर्ति के लिए सहचरों को त्यागना पड़ता है। ये 1928 में लिख रहे हैं फिर 1945 में अक्टूबर 5 में गांधी ने और एक पत्र लिखा था। हमारे बीच का अन्तर इतना मूलभूत है, 1945 और 1942 में वह कह चुके हैं डिक्लेयर कर चुके हैं। राजगोपालाचारी जो हैं वह मेरे उत्तराधिकारी नहीं बन सकते, नेहरु मेरे उत्तराधिकारी बनेंगे। 1942 में जब नेहरु ने विरोध किया था क्विट इंडिया का, उसके बावजूद भी उन्होंने उत्तराधिकार एनाउंस कर दिया था, 1945 में चिट्ठी लिख रहे हैं। हमारे बीच का अन्तर इतना मूलभूत हैं कि जनता को उसका पता लगना चाहिए। स्वराज्य के लिए जरूरी है। मैंने **हिन्द स्वराज्य** में जिस शासन प्रणाली का उल्लेख किया है, मैं आज भी उसका समर्थन करता हूँ। उसके उत्तर में 9 अक्टूबर को 1945

में लिख रहे हैं, बहुत साल हुए मैंने **हिन्द स्वराज्य** पढ़ा था और मेरे मन में उसकी एक धुंधली स्मृति है। फिर भी आज से बीस या कुछ अधिक वर्ष पहले जब मैंने पढ़ा था, मुझे पूरे तौर पर अवास्तविक लगा था। इसलिए मुझे आश्चर्य है आप कहते हैं कि पुरानी तस्वीर अब भी आपके मन में अक्षुण है। इंडियन नेशनल कांग्रेस ने इसे कभी भी स्वीकार नहीं किया। 13 नवंबर, 1945 को गांधी ने एक पूर्ण खुले वाद विवाद की मांग की थी। खुले वाद विवाद की मांग वह कर सकता है जो अपने में बिल्कुल निष्ठावान, सत्य का पुजारी है, जिसे किसी चीज की परवाह नहीं है। हम आजकल खुले वाद-विवाद की मांग नहीं करते हैं क्योंकि उससे हमें खतरा लगता है, परन्तु वह हो नहीं सका। उसके कारण कुछ और होंगे, उससे हमें खतरा लगता है। परन्तु महात्मा गांधी से वह कभी अलग नहीं हुए।

1936 में रचित आत्म चरित्र में उन्होंने गांधी से उनके विवाद को बंद नहीं किया। आत्म चरित्र में बराबर लिखते रहे। आत्म चरित्र में कापी प्रश्न पूछे गये हैं, मगर डिस्कव्हरी ऑफ इंडिया में प्रश्न नहीं हैं। स्वीकार ज्यादा हैं। एक मैं बताऊंगा। आत्म चरित्र की लोकप्रियता का रहस्य है कि वर्तमान को पूर्ण रूप से जीते हुए भारत के प्राचीन स्वर्ण युग की गरिमा को वह अपने में सोख लेते हैं और साथ ही भारत व सम्पूर्ण दुनिया के गरिमामय भविष्य का एक रूमानी सपना तैयार करते हैं। यह भारत और विश्व प्रेम गांधी जी के साथ नेहरु को बाँटता रहा। सत्य और अहिंसा की भाव मूर्ति ने नवयुवक को प्रभावित किया। गांधी जी के वाक्य उनके जीवन में उतर गये थे । मुझे लगता है कि हर युग के लिए, हर क्षण के लिए, हजार वर्ष के बाद के लिए, हिन्दुस्तान के हर राजनीतिज्ञ के लिए, सबसे महत्वपूर्ण वाक्य जो गांधी जी जो लिख गये थे, गांधी जी कहते हैं जब भी तुम्हारे मन में संदेह हो जब तुम्हारा स्व तुम पर हावी होता दिखाई पड़े, तब इस परीक्षा को आजमाकर देखिए। गरीब से गरीब लोगों के चेहरे को याद कीजिए

और इससे ज्यादा गाँव के उन गरीबों को याद कीजिए जो आम तौर पर हमारी दृष्टि और विचार से परे होते हैं। अपने को पूछिए कि जो कदम आप उठाना चाहते हैं क्या उससे इन लोगों का कोई फायदा है? मनमोहन सिंह ने यह सवाल पूछा कभी कि हजारों, करोड़ों जो गरीब जनता है उसका प्रायवेटइजेशन से न्यू एकॉनामी से कोई फायदा है? यह नहीं पूछा गया। अगर यह पूछा गया होता तो स्थिति आज इतनी बदतर नहीं होती जो इस देश में हो चुकी है। हम सिर्फ लाखों-करोड़ों उन मध्य वित्त परिवार की उन्नति को देख रहे हैं। मगर करोड़ों-करोड़ों गरीब गाँव की जनता की ओर हम नहीं देख रहे हैं। हम सोच रहे हैं कि वहाँ पर टेलीविजन पहुँच गया है। वहाँ पर जो है, चिप्स पहुँच गये हैं। वहाँ पर और बहुत सारी चीजें पहुँच गई हैं तो देश उन्नति कर रहा है। हमने नहीं देखा। मैं इसको फिर दोहराता हूँ। अपने को पूछिए कि जो कदम आप उठाना चाहते हैं क्या उन लोगों को उससे कुछ फायदा है? दूसरे शब्दों में क्या ये करोड़ों भूखे और आध्यात्मिक दृष्टि से वंचित को स्वराज्य तक पहुँचाया जायेगा। तब देखेंगे कि आपके संदेह और स्व आपसे बिदा हो चुके हैं।

इस देश का परिदृश्य, इस देश की जनता, सदियों से बनता हुआ इसके इतिहास को उन्होंने हमेशा मुक्त किया। आश्चर्यचकित किया, दुख और खुशी भी दी नेहरु को। यह भी सुबह कहा गया कि नेहरु का जो चरित्र है, वह काव्यमय है, उत्श्रृंखल है। आत्म चरित्र की संरचना में यह काव्यमयता दिखाई पड़ती है और किस तरह से वह परिवार और व्यक्तिगत जीवन की जो इतिहासात्मकता है उसके साथ वह समसामयिक राजनीतिक को जोड़कर एक काव्यमय ढंग से अभिव्यक्ति को रूप देते हैं। यह मत सोचिए कि गांधी जी केवल मेरे जो हैं, नैतिकतावादी, नीरस, प्रोजेंस व्यक्ति थे। उनमें भी बहुत ज्यादा काव्यत्मकता और उस काव्य के बड़े उदाहरण उनमें मिल जाते हैं। एक

कवि हृदय उनमें छिपा हुआ है उसका एक उदाहरण मैं आपके सामने रख रहा हूँ। वह कह रहे हैं, मृत्यु मनुष्य के विकास के लिए उतनी ही आवश्यक है जितना कि स्वयं जीवन। यह हमारी जानकारी में ईश्वर इस दुनिया का सबसे बड़ा क्रांतिकारी है। वह प्रलय ले आता है, वह स्थान पर तूफान ले आता है। जहां पर कुछ क्षण पहले शांति थी, वह पहाड़ों को धूल में मिटा देता है जिनका निर्माण उसमें अपार धैर्य और पूरी संवेदना के साथ किया था। मैं जब आकाश की ओर देखता हूँ तो डर और आश्चर्य मुझे घेर लेते हैं। मैंने भारत और इंग्लैण्ड के शांत और नीले आकाश में बादल को इकट्ठे होते, फिर उनको पूरे उन्मादता के साथ फटते देखा है और आबाध होकर मैं उन्हें देखता रहा।

उदाहरण कुछ बड़ा है पर सोचिए, गांधी जी जीवन और मृत्यु, क्रांतिकारी ईश्वर प्रलय प्रभा अचानक शांत परिवेश को ताड़ता हुआ, आंधी का चलना पहाड़ों का टूटना विस्तृत आकाश तथा प्रलय के बादलों की बात कह गये हैं। ये सारी बातें उस समय रवीन्द्रनाथ कह चुके थे और हिन्दी बांग्ला और दूसरी भाषाओं के कवि कह रहे थे। प्रेमचंद जी भी इस भावावेग से प्रभावित थे और जीवन के कंठो में पता नहीं कहां से एक नदी की धारा बहने लगी थी। अगर वह धारा नहीं बहती प्रेमचंद वह कन्सेपप्ट हमें कभी नहीं दे पाते जिसे कहते हैं आदर्शोन्मुख, यथार्थवाद। आदर्श के साथ जुड़ा हुआ यथार्थ । पर इस मामले में भी प्रेमचंद महात्मा गांधी का ही अनुसरण कर रहे थे। गाधी जी यथार्थ को आदर्श की तरफ मोड़ देते थे क्योंकि यह जो है कभी आदर्श को यथार्थ का विरोधी नहीं मनता। यह देखा है कि ये दो जीवन के दो पक्ष हैं। यथार्थ का जो विरोध है, वह मिथ्याचरण है। आदर्श नहीं है। यह बात उन्होंने गांधी जी से ली थी। मैं गांधी जी का वाक्य फिर आपके सामने रख रहा हूँ। वह कहते थे, आप लोग सब इस मुहूर्त से प्रत्येक स्त्री और पुरुष अपने को स्वतंत्र मानना शुरू कर देंगे। हम लोग सब गुलाम थे परन्तु वह कह रहे हैं कि आज से इस मुहूर्त से आप मानना शुरू कर दीजिए कि आप गुलाम नहीं हैं, स्वतंत्र हैं, आपको यह अनुभव करना होगा कि आप किसी राज्य सत्ता के अधीन नहीं

हैं। ये कोई कल्पना नहीं है। आपको स्वाधीनता की चेतना का प्रसार करना होगा। मानों यह आपके जीवन में आ चुका है और जब आप ऐसा सोचना शुरु करेंगे तब दासता की श्रृंखला अपने आप टूट जायेगी।

गांधी चरित्र की यह नींव अभिमत भगवत निष्ठा पर चिट्ठी, वह ऐसी बातें कह सकते थे और इसलिए राजनीतिक आंदोलनों में कभी असफल होने पर भी गांधी जी का पतन नहीं हुआ। किसी एक आन्दोलन में असफ़ल होने के बाद लोगों जीवन धूल में मिट जाता है, किन्तु गांधी के जीवन में ऐसी कोई घटना घट नहीं सकती क्योंकि आन्दोलन के असफल होने पर सिर्फ वह और भी अधिक शक्ति संचय कर कर्मभूमि में पुनः आविर्भाव होते हैं। वह उनकी सुगंभीर तथा अटल भगवत निष्ठा है, इसलिए सत्य के प्रयोग में लिखा है। यह सत्य केवल हमारा कल्पित सत्य नहीं बल्कि स्वतंत्र चिरस्थायी सत्य है।

●●●

नेहरु : अपने समय के इतिहास की ऐतिहासिक निर्मिति

● नरेश मेहता

गांधी और नेहरु के संदर्भ में विपरीतताएं इतनी अधिक आधारभूत और तार्किक हैं कि ये दोनों दो भिन्न गोलार्द्धों वाले उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव जैसे लगते हैं। प्रायः इन दोनों का नाम वैसे तो हम एक ही साँस में ले लिया करते हैं। यह सदाशयी सरलीकरण तो हो सकता है, लेकिन शायद उन्हें जानना न हो। यदि हम इनकी विपरीतताओं की तथ्यपरक ढंग से पड़ताल करें तो सतही तौर पर भले ही हमें अलग दूरी लगे, पर उस स्थिति में भी शायद है ये सम्पूरक लगे और आप जानते ही हैं कि यह कोई आवश्यक नहीं कि सम्पूरक समान ही हो।

गांधी और नेहरु जीवन के दो भिन्न प्रकार ही नहीं, बल्कि निर्णय और परिणितियाँ हैं। नेहरु वस्तुतः अपने समय के इतिहास की ऐतिहासिक निर्मिती हैं और इतिहास पात्रों का निर्माण करता है न कि चरित्रों का। इसलिए नेहरु पात्र हैं, चरित्र नहीं। चरित्र निर्मिती संस्कृति या धर्म की भूमि पर होती है। इसलिए गांधी पात्र नहीं, चरित्र हैं। तात्पर्य, नेहरु इतिहास का उपयोग नहीं करते, बल्कि इतिहास ही नेहरु का उपयोग करता है, लेकिन गांधी पर कहीं भी इतिहास का कोई दबाव नहीं मिलता, बल्कि उनका ही दबाव इतिहास पर होता है फिर चाहे वो जनरल स्मर्ट्स से व्यवहार करना हो या ब्रिटिश सम्राट से फकीरे बाने में मिलने जाना हो या वायसराय जैसे किसी महामहिम को अपने आश्रम में सामने चटाई पर बैठाल कर व्यवहार करना हो। लगता है इतिहास गांधी का अनुसरण करने के लिए वर्धा भागे जा रहा है या पठारी कटीले मार्ग पर पसीना बहाते हुए वर्धा चला जा रहा है। ऐसे

सैकड़ों उदाहरण और प्रकरण गांधी और इतिहास के बीच देखने को मिल जाएंगे। जबकि नेहरु इतिहास का संधान या अनुसरण करते हैं। यह तार्किक अंतर अनायास नहीं आया।

स्वाधीनता के एवरेस्ट शिखर के ये दो महान साहसिक अपने-अपने मार्गों पर और दिशाओं से अभियान पर निकले हैं। यह अलग बात है कि दोनों को एक दूसरे की आहट थी और आवश्यकता पड़ने पर जरूरी आक्सीजन तथा रसद भी उपलब्ध भी करवायी। निश्चित ही दोनों निर्मिति में उन आधारभूत संस्कार, पारिवारिक परिवेश तथा स्थानीय वातावरण का बहुत बड़ा हाथ रहा और ऐसा आज भी होता है। चूंकि दोनों के जीवन की सारी घटनाओं के बारे में हम सब विस्तार से परिचित हैं इसलिए उन घटनाओं का वर्णन न करके, केवल उनका संकेत देकर ही उससे निकाले गए निष्कर्षों को प्रमुखता देना ठीक होगा।

वस्तुत: दोनों ही सम्पन्न परिवेश के थे। परन्तु नेहरु की सम्पन्नता में इतिहास की राजसगंध थी, जबकि गांधी की सम्पन्नता में वैष्णवता तथा जैन तापसता का स्पष्ट प्रभाव था जो कालांतर में निर्णायक बना। नेहरु ने अपने संदर्भ स्वयं ही तथा दूसरों ने भी इस मध्यकालीन सामंती तथा आधुनिक पश्चिमी प्रभाव को स्वीकारा है। यही कारण है कि नेहरु जब भी जीवन को पारिभाषित या व्याख्यायित करते हैं, तब वास्तविक जीवन अनुभवों के स्थान पर लोग इतिहास उसका प्माण या प्रेरणा खोजते हैं और वहाँ से एक प्रकार की गहरी समझ वाली प्रशांतता के साथ बाहर आते हैं।

वस्तुत: नेहरु देशकाल को इतिहास के गवाक्ष के बिना न देख ही पाते हैं और न समझ ही पाते हैं। इसके ठीक विपरीत गांधी और जीवन के विपरीत न तो ऐसी कोई बाध्यता है और न ही दृढ़ता। गांधी भी विलायत गए थे। थोड़ा बहुत उन्हें भी वहां अंग्रेजियत ने मोहा था, लेकिन वहाँ से लौटकर मन, प्राण और देह पर जिनता भी जादू था, वह उन्हें चापे रहता, अगर वे भारत लौट कर केवल एक बैरिस्टर भर बने रहते। उस स्थिति में पोरबंदर वाला भीरू मोहन का ही विलायत

पलट वह स्वरूप होता। लेकिन भीरू मोहन और भावी गांधी के बीच अफ्रीका के प्रवास में एक ऐसा दुर्दान्त हस्तक्षेप किया कि बीज को पता ही नहीं था कि वह सेमल का नहीं, बल्कि अक्षय वट का संवाहक है। नेहरु के संदर्भ में ऐसा कुछ नहीं घटित हुआ। उनमें और स्थानीय परिवेश में कोई समरसता नहीं थी। वह वस्तुत: अपने सत्य की विकल लपट के लिए ईंधन की तलाश में, परिवेश में भटकती आग थे। अपने मध्यकालीन सामंती स्वभाव और अंग्रेजी आधुनिक मानसिकता की अपने परिवेश वे चूल नहीं बैठाल पा रहे थे। वस्तुत: यह सृजक के अकेलेपन की एक ऐसी विकलता थी, जिसका समाधान उन्हें इतिहास के प्रशांत सागर के तट पर ले जाता था। इसलिए नेहरु के संदर्भ में उचित या अनुचित, मुझे दो ही विषय याद आते हैं। एक ग्रीक माइथोलाजी का नारीसस और दूसरा शेक्सपियर का एम्बीलिट। सब जानते हैं कि नारीसस ने जब पहली बार झरने के जल में अपना प्रतिबिम्ब देखा तो वह अवाक रह गया कि यह अप्रियतम स्वरूपवान व्यक्ति और जब बोध हुआ कि अन्य कोई नहीं वह स्वयं है तो वह ठगा सा रह गया। बंधी मुट्‌ठी पर ठोढ़ी टिकाए नेहरु के प्रसिद्ध चित्र वाली मुद्रा क्या इतिहास के प्रशांत जलों में नारीसस जैसी झांकती नहीं लगती और जहाँ न जाने कितने प्रदातिम और सम्राट दिखलाई देते हैं। ज्यूलियस सीजर, सिकंदर महान, सम्राट अशोक या अकबर यह उनके प्रतिबिम्ब भले ही न हो, परन्तु कुछ-कुछ तादात्मयता जरूर है और वह ठगे से नहीं, वरन् आत्ममुग्ध रह जाते हैं।

इसके ठीक विपरीत गांधी का आचरण और व्यवहार है। इतिहास ही नहीं, बल्कि किसी भी प्रकार की बाधा जो कि प्राय: प्रेत बाधा जैसी हो जाती है गांधी में कहीं नहीं है। वह उत्तरोत्तर निर्वेद की भूमि की ओर बढ़ते जाते हैं उनमें देश और देश से संबंधित सारी संज्ञाएं हैं। सर्वनाम, विशेषण, पहचान सब निश्चेत हो जाते हैं। तात्पर्य कि गांधी के सत्व पर से ये सारी चीजें बासी रास्तों की भांति देश में ही छूट जाती हैं, क्योंकि काल में सिवाय सत्यं के और कुछ वहन करना संभव नहीं होता।

कहना न होगा कि गांधी इतिहास और जीवन से व्यवहार करने की समझ लेकर अफ्रीका से नहीं लौटे थे, बल्कि अपने स्वत्व के वास्तविक प्रवृजन की दिशा का आभास लेकर भी लौटे थे। भीरू मोहन अब कर्मवीर मोहनदास हो गया ता। सत्याग्रह और आधारभूत मनुष्य में निष्ठा का महत्व जैसे-जैसे गहराता गया गांधी ने अपने पर से भाषा, भूषा, आग्रह सबको उतार फेंका और अब केवल आवश्यक वस्तुओं और अस्मिता के साथ देश और काल में क्रिया रूप बनकर खड़ा हो गया। बीज का अक्षयवट होना, भीरू मोहन का महात्मा ही नहीं, परात्पर हो जाना, एक ऐसी अविश्वसनीयता है, जिसके सामने इतिहास के महानायक ही नहीं,बहुत से अन्य क्षेत्रों के महाचरित्र भी बौने ही तो हैं, क्योंकि गांधी में किसी भी प्रकार की कोई लालसा, कोई कामना, कोई इच्छा शेष नहीं रहती। गांधी की असंचय की भूमि से भिन्न नेहरु की भूमि है। हेमलेट की मानसिकता वाली मानवीय भूमि है। क्या हो ?क्या न हो ?

उपरोक्त दोनों बिम्ब केवल नेहरु की मानसिकता को समझने या स्पष्ट करने के लिए प्रयुक्त हुए हैं, न कि उनकी अवमानना करने के लिए हैं। हर हालत में नेहरु जो कि संस्पर्शी हैं, बुद्धिमान हैं और काफी सीमा तक प्रखर भी थे। अपने समय की स्थिति को भलीभांति समझते थे कि अतीत कितना ही मोहक लगे, निर्बाध लगे, पर वर्तमान कभी भी नहीं बन सकता। हाँ, चीजों को पुनर्रचित किया जा सकता है। इस समझ ने नेहरु को पश्चिम की राजनीति और ऐतिहासिक गिरफ्त से बाहर निकाला। उन दिनों यूरोप की विभिन्न क्रांतियों ने नेहरु ही नहीं, बल्कि तत्कालीन युवा भारतीय मानसिकता को गहरे प्रभावित किया था, फिर चाहे वो फ्रांस की राज्य क्रांति रही हो या रूस की सर्वहारा क्रांतियां या स्पेन का गृह युद्ध।

नेहरु का उत्तेजित होना मानवीय था, स्वाभाविक था, परन्तु वो रूमानी ढंग से भले ही ऐसी क्रांतिकारियों के प्रति उत्तेजित या लालायित होते रहे हों, पर ऐसा नहीं लगता कि वो क्रांतिकारी आंदोलन में कूद

भी सकते थे। वैसे साहसिकता नेहरु का मूल स्वर था कि जब कर्मवीर गांधी को सन् 1920 और 1930 के बीच बिना किसी तामझाम वाली राजनीति के साथ इतिहास पर चलते देखा तो निश्चित ही नेहरु को गांधी कम महत्वपूर्ण लगे, पर जब क्रमशः विदेशी वस्तुओं की होली, नमक सत्याग्रह, असहयोग और अन्त में करो या मरो पर इतिहास को लाकर गांधी ने खड़ा कर दिया तो नेहरु में उसी प्रक्रिया के साथ गांधी के प्रति जो प्रतिक्रिया हुई कि गांधी अनाम से महत्वपूर्ण होते हैं। लेकिन कुल मिलाकर नेहरु के लिए गांधी श्रद्धा पात्र हो सकते थे। थे भी, पर आदर्श के यह कहना मेरे लिए मुश्किल है, क्योंकि नेहरु गांधी के संदर्भ विकसित नहीं हुए थे, तो विवश हुए थे। यही कारण था कि नेहरु गांधी के पास राजनीतिक कारणों से ही ज्यादा गए होंगे, न कि गांधीवादी जीवन पद्धति, चिंतन और उनके बुनियादी कारण के कारण।

वस्तुतः दोनों की प्रक्रिया में अंतर है और वह है गांधी। बिंदु से आरम्भ हो कर पराप्पर की बंधनहीनता में उत्तरोत्तर विलयित प्रवाह है, जबकि समाजवाद की परिधि से आरम्भ कर नेहरु अंत में राज्य और सत्ता के बिन्दु में समाहित इतिहास के एक पात्र भर हैं। यह अलग बात है कि गांधी की ऐतिहासिक अनिवार्यता और वर्चस्वता से नेहरु बराबर सबक लेते रहे, परन्तु घोषित रूप से गांधी को अपने में अनुसुयूत शायद नहीं किया होगा। यही कारण है कि गांधी के लिए धर्म किसी भी प्रकार मनोवृत्ति नहीं है, बल्कि उनका हिन्दू होना ही, सर्वधर्मी होना ही महान है जबकि नेहरु के लिए धर्म एक लाल कपड़ा है। धर्मनिरपेक्षता एक नकारात्मक मानसिकता है। उस सकारात्मकता के लिए उसमें सभी प्रकार का मनुष्य चाहे-अनचाहे टूटे-फूटे रूप में ही सही खड़ा है। सर्वधर्म समभाव धर्मनिरपेक्षता नहीं है। इसी प्रकार स्वाधीनता राष्ट्र और समाज के निर्माण का स्वप्न गांधी से सर्वथा भिन्न है नेहरु का, चाहे वह ग्राम स्वराज्य, पंचायत या व्यक्ति कुछ हो, गांधी में सब आधारभूत शक्ति है, जंबकि नेहरु में समाजवाद की जो समझ है, उसके कारण सत्ता में आ जाने के बाद परिस्थितियों में, मानसिकता में तार्किक अंतर आ गया। नेहरु जैसे-जैसे सत्ता के निकट होते गए राष्ट्र उपेक्षित

होता चला गया। निश्चित ही नेहरु ने ऐसा कभी सोचा भी न होगा और चाहा भी न होगा, परन्तु वे ये भूल गए कि आयुधों के बदल जाने से युद्ध की प्रकृति और परिणाम दोनों की बदल जाया करते हैं।

वही हुआ, अत्यंत तेजस्वी सदाशयता का तिरोधान एक राजपुरुष के रूप में हुआ। निश्चित ही गांधी को अपेक्षा रही होगी कि नेहरु इतिहास से सही सुलूक कर पाएंगे, लेकिन ऐसा लगता है कि व्यवस्था चाहे वो किसी भी प्रकार की हो, गति तथा तेजस्विता के लिए दल-दल ही सिद्ध होती है। यही कारण है कि गांधी प्राय: अपने को अराजक कहा करते थे। जाहिर है कि गांधी द्वारा परिकल्पित ऐसी मुक्ति, ऐसी अराजकता किसी भी प्रकार की, किसी भी काल की कैसी ही व्यवस्था में न संभव थी और न हो सकती है। इस तथ्य को गांधी समझ गए थे इसलिए स्वाधीनता संग्राम के सारे कठिन समय में वे हमारे साथ खड़े रहे, बने रहे, परन्तु आजादी के बाद जहाँ से इतिहास आरम्भ होता है गांधी काल के परिपाश में निस्संग चले जाते हैं और घटित रहने के लिए रह जाता है, इतिहास से शास्वत प्रेरणा प्राप्त करने वाला एक ऐसा हेमलेट जिसे गांधी ने अपने आप उत्तराधिकारी घोषित किया था।

●●●

भारत के औद्योगिक राष्ट्र बनने का स्वप्न था नेहरु का

● निर्मला देशपाण्डे

मुझे, बापू के जो दो उत्तराधिकारी थे, उनमें से एक के साथ भारत की परिक्रमा करने का और दूसरे के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। भारत के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी संत बिनोवा भावे और राजनीतिक उत्तराधिकारी पंडित नेहरु दोनों के बीच में जो आत्मीयता और प्रेम का सम्बन्ध था, वो देखते ही बनता था। एक बार विनोबा जी ने नेहरु जी से कहा कि आप शायद पोलीटिक्स के लिए अनफिट हैं। नेहरु जी जरा देखने लगे कि क्या कहना चाहते हैं? विनोबा जी ने कहा-आप इसलिए अनफिट हैं कि आप झूठ नहीं बोल सकते हैं और द्वेष नहीं कर सकते। तो नेहरु जी खिलखिला कर हँस पड़े और कहने लगे विनोबा जी बात तो आपकी सही है, लेकिन मेरी इस कमी की पूर्ति मेरे सेक्रेटरी करते होंगे। तो इस तरह उन्होंने बात कह दी कि उनका जो पारदर्शी, साफ एक अग्नि की तरह अंतरंग था वो प्रकट हुआ।

विनोबा जी अक्सर कहा करते थे कि फिलॉसफर नेहरु जी किंग प्लेटो की जो कल्पना थी, उसकी कोटि के थे और प्राइम मिनिस्ट्रिशिप उनके लिए बहुत छोटी-सी चीज थी। इसलिए अभी आदरणीय मेहता जी ने कहा कि कवि हेमलेट की भी उनमें छाया उसकी दिखती है, उसकी यही वजह थी कि प्राइम मिनिस्टरशिप से वो बहुत ऊंचे थे, लेकिन प्राइम मिनिस्टर बनना पड़ा था, बने थे, निभा रहे थे, बहुत खूबी के साथ निभा रहे थे। तो ये जो फिलॉसफर किंग की उनकी एक हस्ती थी, विनोबाजी ये भी, विनोद में, कभी कभी कहा करते थे कि भाई

हम दोनों हैं तो एक गुरु के चेले, लेकिन पंडित जी हैं शेर। शेर हैं, पर पिंजड़े में बंद हैं। अब मैं कुत्ता हूं मैदानी खूब भौकता हूं। मुझे कोई बंधन नहीं। तो नेहरु जी को किसी ने यह सुनाया, मुस्कराये और फिर जब विनोबा जी से मिलने आए और बात करके गाड़ी में बैठ रहे थे तो बोले- चल चला जा रहा है शेर, अब फिर पिंजड़े में।

उसको दूसरे कोई समझ नहीं सके। किसी ने विनोबा जी को बताया तो उन्होंने कहा कि ये वजह थी कि मैंने कहा था कि शेर है पर पिंजड़े में है।

तो यह जो दोनों के बीच की अंतरंग आत्मीयता थी, उसका कारण ये था कि वे दोनों एक ही गुरू के चेले, दिखने में बहुत भिन्न जैसे बापू और पंडित जी। बाहर से अगर कोई देखे तो बहुत भिन्न लगेंगे, लेकिन अंदर से देखें तो एक लगेंगे। उस भिन्नता में जो आंतरिक एकता थी, वो ऐसी अद्‌भुत चीज थी, जो भारत में ही सम्भव थी। इस भूमि में ऐसी कुछ विशेषता है कि गुरु कहता है-सब से ज्यादा खुशी उसे तब होती है जब शिष्य आगे बढ़ता है। पुत्र या कन्या जब आगे बढ़ते हैं तो माता-पिता को सबसे अधिक खुशी होती है। ये ऐसी अजीब संस्कृति है यहाँ की कि अपनी पराजय में सबसे बड़ी विजय लोग देखते हैं और ये तो मैं नहीं कह सकती हूँ कि गांधी जी को यह सौभाग्य प्राप्त हुआ था, शिष्यों को आगे बढ़ाने का, कुछ-कुछ हुआ था, लेकिन गांधी जी सबसे ऊपर थे ऐसे कि युग-युग तक ऐसी हस्ती नहीं आती है। वो आने वाली सभी सदियों के मसीहा थे। गांधी जी को पहचानना आसान नहीं था।

नेहरु जी उनके साथ बहस करते थे और जब कोई दोनों में मतभेद होते थे, बहुत जोरदार बहस होती थी और जैसा भाई अनिल जी ने कहा-गांधी जी मुस्कराकर कह देते थे कि मेरे जाने के बाद जवाहर मेरी भाषा बोलेगा। तो वो जानते थे कि भीतर से ये जान रहे हैं। दोनों एक दूसरे को भीतर से जानते थे और इसीलिए भारत में इस युग

में इन दो महान हस्तियों ने जन्म लेकर दुनिया के सामने एक कीर्तिमान प्रस्थापित क़िया। गांधी जी की जो आध्यात्मिक ऊंचाई थी, वो तो युग-युग में कोई ऐसी हस्ती पैदा होती है।

जनम जनम मुनि जतन कराही।
अंत राम कुछ आवत नाही।।

अनेक जन्मों तक साधना करने के बाद भी मरते समय राम का नाम याद नहीं आता है, लेकिन जिसके सीने में गोली लगते ही मुँह से निकला, हे राम, वह कौन-सा योगी था? कौन-सा साधक था? कौन सा सिद्ध था? उसकी छाया में जो जो पले, उनको उसने जैसे नेहरु जी कहा करते थे–ही क्रिएटेड हीरोज आउट ऑफ कामन प्ले। मामूली मिट्टी से उन्होंने महान हस्तियां पैदा की और मुस्कराते हुए कहते-हम भी उनमें से एक हैं। हैं तो मिट्टी के लेकिन महात्मा के स्पर्श से हममें भी कुछ-कुछ महानता आ गयी है। तो यह जो महात्मा के संघर्ष का अनुभव करने वाले व्यक्ति थे, उनमें विशेष संस्पर्श का अनुभव पंडित जी ने किया था और पंडित जी ने महात्मा के उस अहिंसा के विचार को, आजादी के बाद विश्व के रंगमंच पर, विश्व के अंतर्राष्ट्रीय मंच पर पेश करने का, स्थापित करने का काम किया।

अगर मैं एक बात आंपसे कहूं, आपको मालूम है कि स्वतंत्र पार्टी के नेता मीनू मसानी साहब पंडित जी के कभी प्रशंसक नहीं रहे बल्कि घोर आलोचक रहे। उन्होंने मेरे पिताजी को एक बात बतायी कि मैं जब यूरोप और अमरीका जाता हूँ तो बड़े-बड़े नेता जो नेहरूजी के आलोचक हैं, वो भी बताते हैं कि कोल्डवार का वातावरण कम करने में और दुनिया में शांति स्थापित करने में अहिंसा की दिशा में दुनिया को ले जाने में नेहरु जी का जो योगदान है वो और किसी का नहीं है। ये उनके घोल आलोचकों ने, पश्चिमी आलोचकों ने कहा है और आज जब हम देख रहे हैं कि एक तरह से दुनिया में एक छटपटाहट है अहिंसा के लिए, शांति के लिए। हिंसा बढ़ती जा रही है, लेकिन

जितनी हिंसा बढ़ रही है, उतनी चाह बढ़ रही है। दुनिया में अहिंसा की चाह को बढ़ाने में सबसे बड़ा योगदान राजनीति के क्षेत्र मे पंडित जवाहर लाल नेहरु का था। महात्मा के प्रति, अपने गुरू के प्रति उनकी ये सबसे बड़ी श्रद्धांजलि रही है और गुरू कहेंगे, बेटा शाबास। तुमने बहुत अच्छा काम किया।

नेहरुजी ने यह भी कहा था, जब घोर कोल्डवार का, शीत युद्ध का वातावरण था, तब भी उनकी पैनी दृष्टि देख रही थी, जो आर. के. पाटिल साहब के पास वो पचास के दशक में बोले। जो आप लोग सोचते हैं, एक डेमोक्रेटिक ब्लॉक और एक कम्युनिस्ट ब्लॉक, दोनों में कुछ बीच-बीच आने की, नजदीक आने की प्रक्रिया आरम्भ हो गयी है। पाटिल साहब ने कहा-नेहरु जी हमको तो दिखाई नहीं देता। नेहरु ने कहा-आप देखेंगे। वो दूर का देख पाते थे और इसीलिए जब विश्व में शांति की बात बढ़ती जा रही है, जब अमेरिका और रूस के नेताओं ने हस्ताक्षर किए थे उस संधि पर परमाणु अस्त्रों को कम करने के लिए, उस समय जो सशरीर मौजूद नहीं थे, लेकिन गांधी का वो सर्वोत्तम चेला, उस वक्त मौजूद था, विचार के रूप में। उनकी वह विजय थी, वो नेहरु जी की नीति की विजय थी। हिन्दुस्तान की विदेश नीति, गांधी के सिद्धांतों पर चला कर बहुत आलोचना सही उन्होंने, लेकिन सही मार्ग से डिगे नहीं। आखिर दुनिया को मानना पड़ा। गांधी जी का दूसरा सपना था– ईश्वर अल्लाह तेरे नाम, सबको सन्मति दे भगवान। चारों तरफ माहौल था साम्प्रदायिकता का। उसका कारण भी था। लोग कट रहे थे। मर रहे थे। विस्थापित हो रहे थे, लेकिन उस समय भी गांधी के विचारों पर अडिग रहने वालों में पंडित जी थे। अगर पंडित जी देश के प्रधानमंत्री नहीं होते, तो आज क्या स्थिति होती, सोचने से भी मन सिहर उठता है। हिन्दुस्तान के जो सारे हमारे मुसलमान भाई-बहन हैं, जो हमारे अपने हैं, उन सबसे हम निवेदन करना चाहेंगे कि भारत के प्रधानमंत्री के नाते पंडित जी ने बापू के प्रति अपना कर्त्तव्य

निभाया, इसलिए दो-दो राष्ट्रपति जाकिर साहब और फखरूद्दीन साहब भारत के सर्वोच्च स्थान पर बैठे। हिन्दुस्तान के हर क्षेत्र में सब सम्मान के साथ जीवन जी सकते हैं। इसमें पंडित जी का बहुत बड़ा योगदान है। वो जानते थे कि अगर मैं यह नहीं करूंगा तो महात्मा के प्रति अपने कर्त्तव्यों को नहीं पूरा करूंगा और उनकी वो अपनी निष्ठा थी।

इसमें कोई शक नहीं कि सब धर्मो, सर्वधर्म समभाव, जिस अर्थ में गांधी जी प्रकट करते थे वह बेहद अनूठा था। जब गांधी जी से किसी ने पूछा कि आप हिन्दू हैं। एक पत्रकार ने पूछा। उन्होंने कहा-जी हाँ। मैं सनातनी हिन्दू हूँ। पत्रकार दंग रह गए। क्या बात कर रहे हैं महात्मा ? गांधी जी मुस्कराए और कहने लगे इसीलिए मैं सच्चा मुसलमान हूँ। इसीलिए मैं सच्चा ईसाई हूँ। सच्चा जैन हूँ और बौद्ध हूँ, सिख हूँ, पारसी हूँ, यहूदी हूँ। जो सच्चा होता है, नेक होता है, वही सच्चा हिन्दू और सच्चा मुसलमान होता है। जो सच्चा नहीं हो, वो नाम कुछ भी ले वो न हिन्दू है, न मुसलमान है, तो काफिर है। काफिर के मायने कि वह धर्म को नहीं मानने वाला है। यानी हमारे परम मित्र कम्युनिस्टों की बात मैं नहीं कह रही हूँ, उनकी भी अपनी एक आस्था है।

जैसा विनोबा जी ने कहा था। उनसे पूछा गया कि आप कौन हैं? हिन्दू हैं या मुसलमान हैं? क्योंकि वो गांधी जी की तालीम की मुताबिक कुरान शरीफ के ऐसे आलिम बने थे कि उनके मुकाबले में हिन्दुस्तान में कोई कुरान शरीफ को जानने वाला था नहीं। रूहुल कुरान के रूप में उन्होंने किताब जो दी है दुनिया को। तो उनसे जब पूछा गया, उन्होंने कहा-दुनिया में अकसर दो किस्म के लोग होते हैं। कुछ होते हैं **ही** वाले और कुछ होते हैं **नहीं** वाले। जो **ही** वाले होते हैं वे कहते हैं हम हिन्दू ही हैं, हम मुसलमान ही हैं, हम ईसाई ही हैं। इन ही वालों ने ऐसी तबाही मचा रखी है कि दुनिया में धर्म के नाम पर जितना खून बहा

है और किसी नाम पर बहा नहीं। यही देख कर विनोबा जी के शब्द हैं—यहाँ मुनि कार्ल मार्क्स ने कहा—यह धर्म-वर्म सब झूठ है। बिल्कुल सही बात थी एक हद तक। विनोबा जी ने कहा कि हम गांधी के देश के हैं। हमें ही वाला भी बनना नहीं। हमें नहीं वाला भी बनना नहीं। हमको भी वाला बनना है। इसलिए अगर हम से आप पूछे तों विनोबा जी का जवाब था, ठीक गांधी जी के लहजे में, उन्होंने कहा, मैं हिन्दू भी हूँ, मैं मुसलमान भी हूँ, ईसाई भी हूँ, जैन भी हूँ, बौद्ध भी हूँ, पारसी भी हूँ, यहूदी भी हूँ। एक कम्युनिस्ट मित्र ने पूछा-हम तो नास्तिक हैं विनोबा जी। अच्छा - मैं आस्तिक भी हूँ, नास्तिक भी हूँ।

यह जो 'भी' वाली बात है। यह हिन्दुस्तान की विशेषता है, जिसको पंडित जी दिल से मानते थे। उनके दिल में कोई फर्क नहीं था इंसान और इंसान के बीच में। सर्वधर्म समभाव का जो निचोड़ है, सार है, वह पंडित जी के हृदय में पनपा था। उनके लिए हर इंसान, इंसान था और हरेक के लिए समान प्यार उमड़ता था। केवल हिन्दुस्तान ही नहीं, बल्कि सारी दुनिया के सब इंसान उनके लिए समान थे।

तो सर्वधर्म समभाव उनके जीवन में उतरा था, वो भाषा सेकुलरिज्म की बोलते थे। ये शब्द है पश्चिमी। विनोबा जी ने एक बार पंडित जी से कहा कि पंडित जी आप जरा सेकुलरिज्म की बजाय सर्वधर्म समभाव शब्द इस्तेमाल करें तो अच्छा रहेगा। पंडित जी मुस्कराए, कहने लगे-हाँ, विनोबा जी, हिन्दी में तो ठीक है, लेकिन अंग्रेजी में यही शब्द चल पड़ा है। उन्होंने कहा-चल पड़ा है, लेकिन उसका कोनेरेशन ऐसा है, जैसे लगता है कि आप धर्म को मानते ही नहीं। ऐसी बात है नहीं। पंडित जी के शयन कक्ष में गीता रखी रहती थी और बुद्ध की प्रतिमा रहती थी। तो ये दो प्रतीक थे आध्यात्मिक साधना के उनके और कितनी ऊँची उनकी आध्यात्मिक साधना थी ये जीवन से ही पता चलता है।

बाह्य जीवन में पंडित जी के बहुत सारी ऐसी बातें होंगी, जो कोई

साधक के साथ जोड़ेगा नहीं। हमको याद है, हम छोटे बच्चे थे, कॉलेज में, फस्ट ईयर की लड़कियाँ, वर्किंग कमेटी की मीटिंग पूना में हो रही थी, हमको भी नेता देखने का शौक हुआ तो हम वालिंटियर बनकर गए। जैसे निकले, मौलाना साहब सिगरेट पीते हुए निकल गए। हम लोग जरा देखने लगे, गांधी जी यहाँ हैं और ये सिगरेट पी रहे हैं। उसके बाद पंडित जी आए, उनके मुँह में भी सिगरेट थी। तो हम लड़कियों ने एक दूसरे से कहा कि देखिए ये भी सिगरेट पी रहे हैं। लेकिन जैसे ही उन्होने देखा कि बापू उधर से आ रहे हैं, झट से बुझा दी और फेंक दी। हम लड़कियों को बहुत अच्छा लगा कि बापू का इतना सम्मान करते हैं। बापू के सामने सिगरेट नहीं पीते तो वो एक उनकी मर्यादा थी। तो हमने एक चीज देखी कि बाहरी जीवन में आपको दिखेगा, कुछ बहुत अंतर सा दिखेगा, लेकिन आंतरिक अंतर नहीं था।

बापू पहचानते थे कि जवाहर क्या हैं और जवाहर पहचानते थे कि बापू क्या हैं। बापू जी थे, अगर उनको पूरी तरह से जवाहर लाल पहचान लेते तो एक भूल ज़ो उन्होंने की जिसको उन्होंने अंतिम दिनों में महसूस किया। पार्लियामेंट के फ्लोर पर बोले कि आर्थिक नीति जो गांधी जी थी, उसको पूरी तरह से अगर हम फालो करते तो देश की बहुत सारी समस्याएं हल होतीं। हमारी यह भूल हुई कि हमने गांधी जी की अर्थनीति को पूरी तरह से फालो नहीं किया। इस भूल को सुधारना होगा। मेरा ख़्याल है, उनके स्वर्गवास के दो-चार महीने पहले, या छः महीने पहले वो बोले हैं। एक तरह से उनका वो स्वीकार है कि एक भूल से हुई, बापू को फालो करने में। उसको सुधारना जरूरी था।

यद्यपि जो उनका सपना था कि भारत एक महान औद्योगिक राष्ट्र भी बने, वो सही था। यह भिलाई, यह तो पंडित जी का, जिसे कहेंगे कि एक प्रेम पात्र था। भिलाई के प्रति जो उनके दिल में प्यार था वो देखते ही बनते था और हमारे सारे रूसी मित्र, इस चीज को देखकर

इतने खुश होते थे कि आपके प्रधानमंत्री के दिल में भिलाई को लेकर जो प्यार है और ये रूस और भारत की, पूर्व सोवियत यूनियन और भारत की मैत्री का ये प्रतीक रूप में जो विकसित हो रहा है, इसके पीछे एक बहुत बड़ा दर्शन था। वो सही दर्शन था। लेकिन साथ-साथ हिन्दुस्तान के हर बेरोजगार को काम देने के लिए केवल पर्याप्त नहीं है। भिलाई आवश्यक है; दुर्गापुर आवश्यक है, भारत को महान औद्योगिक राष्ट्र बनाने के लिए, लेकिन हर हाथ को काम देने के लिए कुटीर उद्योग, ग्राम उद्योग, चरखा चाहिए। ये बात जो थी, वो अंतिम दिनों में पंडित जी ने महसूस की। यद्यपि इसको भी वो बढ़ावा देते चले गए, लेकिन पूरी तरह से गांधी जी की जो अर्थ नीति थी - ग्राम स्वराज पर आधारित, स्वावलम्बी, स्वाश्रयी और आत्म निर्भर जो अर्थ नीति थी, उसमें जो राज था, उसको शायद पहचानने में कुछ विलम्ब हुआ।

आज पर्यावरण के संकट के इस युग में हर विचारक, जब सोचता है कि क्यों ओजोन की परतों में, ये पृथ्वी के रक्षा कवचों में छेद हो हो गया ? क्यों हवा, पानी और धरती व शोर का प्रदूषण बढ़ रहा है तो उस विचारक को नाम भले ही न जानें, लेकिन उन सिद्धांतों पर आना पड़ता है, जो गांधी ने बताए थे। पर्यावरण संकट गांधी विचार के लिए, मेरे जैसे छोटे-छोटे कार्यकर्ताओं के लिए ऐसा वरदान साबित हुआ है जो कभी गांधी जी की बात नहीं मानते थे, उनको झक मारकर माननी पड़ती है। क्योंकि ये महा भयंकर प्रदूषण का राक्षस उन्हें मजबूर कर रहा है सोचने के लिए कि आधुनिक तकनीकी सभ्यता में कहीं बुनियादी भूल है। ये केन्द्रित अर्थ व्यवस्था में कहीं बुनियादी भूल है। इसलिए विकेन्द्रित अर्थ व्यवस्था आवश्यक है। इस दिशा में जब चिंतन शुरू हुआ है दुनिया में, तो जैसा मैंने कहा -जाने अनजाने गांधी को याद किए बगैर चारा नहीं।

अगर पंडित जी इसे पहचान लेते तो आज हिन्दुस्तान की नब्बे

प्रतिशत समस्याएं हल होतीं, लेकिन ये भी एक इतिहास का, जिसे हम कहेंगे, संकेत है। एक व्यक्ति सब काम नहीं कर सकता। तो जो पंडित जी अंतिम दिनों में जिसको उन्होंने समझ लिया था, अब देश को उस पर चलना होगा। देश को नहीं, दुनिया को चलना होगा और ये पश्चिमी राष्ट्रों में गलत अर्थ नीति को, केन्द्रित अर्थ नीति को अपना कर जो प्रदूषण बढ़ाया है, उनको भी, अपने जीवन के आदर्श को बदलना होगा और ये हम लोग हिन्दुस्तान के लोगों का फर्ज बनता है कि जिस तरह पंडित जी उनको खरी-खरी सुनाने के लिए थे, आज हमें भी सुनाना होगा। लेकिन खरी-खरी सुनाने के लिए जब लोग हमसे पूछते हैं कि आप अपने देश में क्या कर रहे हैं। तो जरा अपने गिरेबान में भी झांकना पड़ेगा।

अभी हाल ही में कजाकिस्तान और उबजेकिस्तान जाने का मुझे मौका मिला। हिन्दुस्तान के बुद्धिजीवियों में जब अहिंसा की बात होती है तो पचासों लोग उठ खड़े ही बोलते हैं कि यह गांधी की अहिंसा चलने वाली नहीं है। मैंने सोचा कि कजाकिस्तान में कुछ ऐसा ही सुनने को मिलेगा, लेकिन अहिंसा की बात करते ही एक एकेडेमिशियन खड़ा होता था और कहता था कि आज की इस दुनिया में अहिंसा के बिना चारा नहीं है। सबको गांधी की अहिंसा मानना पड़ेगी और एक मुसलमान प्रोफेसर, बहुत चोटी के प्रोफेसर थे, वो तो यहां तक बोले कि हम महात्मा गांधी को इस जमाने का मुनाफा मानते हैं। सुनकर मैं हैरान रह गई। क्यों? इसलिए कि वहां न्यूक्लियर टेस्ट हुए हैं, उसके बुरे परिणाम उन्होंने देखे हैं इसलिए वो जान गए हैं कि हिंसा क्या है और अहिंसा को समझा रहे हैं।

मेरा आपसे विनम्र निवेदन है कि दुनिया हमसे यही पूछती है कि गांधी का देश क्या कर रहा है? इसका जवाब हमको आपको देना है। भाषण से केवल नहीं, कृति से कार्यक्रम को सफल बनाकर गांधी के

एक राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक सर्वधर्म समभाव वाले समस्त कार्यक्रम को जीवन में उतार कर दुनिया को बताना है कि ये गांधी का देश है। गांधी की राह पर चल रहा है और हर जगह लोग पूछते हैं और बाहर जाने पर तो ऐसी मुसीबत होती है, लोग पूछते हैं कि अहिंसा के लिए आप क्या कर रहे हैं। विकेन्द्रित अर्थ नीति के लिए क्या कर रहे हैं? जवाब कुछ तो हम छोटे-मोटे दे देते हैं, लेकिन दुनिया हमसे पूछ रही है और जब दुनिया ये बात पंडित जी से पूछी तो पंडित जी ने बड़ी शान से कहा कि हमारी विदेश नीति मैत्री, सबके साथ मैत्री की है।

विश्वरचमा चक्षुछाः सर्वाणि भूताणि समीक्षांताम्।
विश्वस्यामम् चक्षुछाः सर्वाणि भूताणि समीक्षै॥

सारी दुनिया की तरफ मै मित्र की निगाह से देखूंगा और दुनिया मेरी तरफ मित्र की निगाह से देखे। ये जो वैदिक ऋषि की आकांक्षा थी। इसको हमने पंडित जी के जीवन में साकार होते हुए देखा है और इसीलिए सारी दुनिया में काम आदमी भले ही राजनेता कुछ कहे, आम आदमी पंडित जी को बहुत मानता था। क्योंकि वो ये जानता था कि ये गांधी के देश का प्रधानमंत्री है।

एक ओर संस्मरण सुनाए बिना मैं नहीं रह सकती हूँ। सन् 1963 की बात है। चीन ने भारत पर हमला किया। पंडित जी के जीवन का सपना भंग हो गया। हिन्दी-चीनी, भाई-भाई का उनका सपना सही था। हिन्दुस्तान और चीन को दोस्त बनना होगा। ये दोनों दोस्त नहीं बनेंगे तो दोनों मार खाएंगे। खाली हिन्दुस्तान और चीन नहीं., समूचे एशिया को एक दूसरे से दोस्ती, समूचे तीसरे जगत को एक दूसरे से दोस्ती करनी चाहिए, तभी हम आर्थिक साम्राज्यवाद का मुकाबला कर सकेंगे। इसको पंडित जी ने बहुत पहले देखा था और इसीलिए सपना संजोया ता कि एक हिन्दुस्तान और चीन एक दोस्त की तरह आगे बढ़ेंगे। उनको

जीवन में सबसे बड़ा दुख जो उठाना पड़ा वह था चीन का भारत पर हमला, लेकिन पंडित जी थे। वो उतने महान थे कि जब उसके चंद दिनों बाद जब सारे देश में उनके खिलाफ वातावरण था, लोग कह रहे थे आपने सेना ठीक नहीं बनायी और हिन्दी-चीनी भाई-भाई का नारा लगाया। जो पुराने लोग हैं उनको मालूम होगा। पंडित जी पर उस वक्त आलोचना की, निंदा की वर्षा हो रही थी। उस जमाने में विनोबा जी मिलने वो शांति निकेत आए। वो उन दिनों की अंतिम भेंट थी। हर साल वो विनोबा जी के पास आते थे मिलने के लिए।

तो वहाँ चीना भवन है। गुरूदेव रवीन्द्र नाथ टौगोर का स्थापित किया हुआ चीनी भाषा सीखने के लिए। वो भी महान ऋषि हे बहुत पहले से उन्होंने सपना देखा था। हिन्दुस्तान और चीन को दोस्त बनना होगा। उन्होने अपने ढंग से प्रयास किया, उस चीना भवन की नयी बिल्डिंग का उद्घाटन था। पंडित जी आए। विनोबा जी ने कहा-आप ही कीजिएं उद्घाटन। तान एन शान, वो बुजुर्ग तो अब नहीं रहे, वो उसके डायरेक्टर थे, महान चीनी दार्शनिक, बड़े विद्वान। पंडित जी, आप सोचिए, कैसा माहौल देश में था। हार हो गयी थी हमारी। पंडित जी का सपना टूट चुका था। उस समय पंडित जी बोलने के लिए खड़े हुए। मैं यहाँ कहना जाहता हूँ कि भारत और चीन की जनता की दोस्ती जो सदियों से रही है, हमेशा रही है। ये अप्स एण्ड डाउन तो होते रहते हैं, लेकिन हम चीनी जनता से कहना चाहते हैं कि आपके लिए हमारे दिल में प्यार है और आप और हम साथ मिल कर आगे बढ़ेंगे। पंडित जी जब बोल रहे थे तो तान एन शान की आँखों में आँसुओं की धार बह रही थी। बाद में बोले - ओनली इण्डियन प्राइम मिनिस्टर केन स्पीक फ्राम दिस हाइट। दुनिया का कोई प्रधानमंत्री हार के बाद इस ऊँचाई पर बढ़कर यह नहीं बोल सकता। यह भारत का ही प्रधानमंत्री ही बोल सकता है।

तो पंडित जी ने हमेशा, भारत का प्रधानमंत्री कैसा होना चाहिए, इसकी मिसाल अपने जीवन के द्वारा दुनिया को बतायी। इंदिरा जी की वो बात याद आती है। एक बार उनको किसी ने एक बात बता दी। तो इंदिरा जी ने कहा-आई रिएक्टेड वेली शार्पली। मैंने कहा-क्या हुआ। कहा-वो कुछ ऐसी बात कह रहे हैं। मैंने उनसे कहा कि हम चाहें जितने छोटे हों, हम चाहें जितने नाचीज हों, लेकिन जिस मुल्क के हम प्रतिनिधि हैं, यह भारत एक महान देश है। यह एक प्राचीन देश है। इस देश के प्रतिनिधि को छोटा नहीं बनना चाहिए, ऊँचा ही होना चाहिए। ये अहसास मैंने कहा-इंदिरा जी, शायद पिता जी से सीखा होगा। तो वे मुस्करा दीं।

सवाल यह है कि ये पंडित जी ने दुनिया के सामने कहा कि उस वक्त तो हम गरीब थे। अनाज भी पैदा नहीं होता था पूरा। भूखे थे, लेकिन जब अमेरिका गए तो बड़ी शान के साथ बोले कि मैं आपको गांधी का संदेश सुनाने आया हूँ। लोग देखते रह गए। उनको लगा कि ये भारत का प्रधानमंत्री हमसे कुछ मांगेगा, और हम कुछ ऑफर करेंगे बड़ी उदारता के साथ । बहुत ऊँची चीज है वो है इस देश का दर्शन, इस देश की संस्कृति, इस देश के विचार, जो गांधी, जिसका सर्वोत्तम प्रतीक थे, वो विचार लेकर पंडित जी सारी दुनिया में गए और हिन्दुस्तान की शान और आन उन्होंने बढ़ायी और दुनिया को बताया कि मैं भी गांधी का एक चेला हूँ। अपने को वो बहुत विनम्र समझते थे, जानते थे कि गांधी कितने महान और उनके सामन हम क्या? लेकिन ये जानते थे कि कितने भी छोटे हम क्यों न हों, हम गांधी के देश के हैं ।

कहानी उनके जीवन की है। पहले जब कमला जी बीमार थीं, वे स्विटजरलैण्ड में थे। गांधजी को वो रोजाना चिट्ठी लिखते थे। उस दिन चिट्ठी छोड़ने गए तो पोस्टमेन ने वो डाक निकाल ली थी वो इनको

आकर के वो बोला, देखकर, उनको नहीं पता कि यह कौन है? सॉरी सर, इट इज क्लोज्ड। पंडित जी को तो वह चिट्ठी गांधी जी को भेजना थी। एकदम उनको सूझा। उन्होंने कहा-दिस इज फॉर मिस्टर गांधी। जैसे पोस्टमेन ने देखा, गांधी। फिर से खोला वह अपना बक्सा, कहा-दीजिए। गांधी जी के लिए चिट्ठी क्या हम अपने आप को न्यौछावर कर सकते हैं। तो नेहरु जी ने कहा-गांधी के लिए दुनिया के आम आदमी के दिल में जो भाव है वो मुझे विनम्र बनाता है। मुझे नसीहत देता है कि कभी न भूलो कि तुम गांधी के देश के हो।

आज यहाँ पर हम लोग बापू के उस लाड़ले जवाहर को श्रद्धांजलि देने, उनको स्मरण करने के लिए एकत्रित हैं। घड़ी मुझ से कह रही है कि मुझे समाप्त करना चाहिए, लेकिन अंतिम सपना नेहरु जी का था, पर गांधी जी का था, उसका भी जिक्र मैं कर देना चाहती हूँ। खुशी की बात है कि चीन के साथ हमारे सम्बन्ध कुछ ठीक हो रहे हैं, होने चाहिए। लेकिन गांधी जी की पाकिस्तान की यात्रा का प्रोग्राम बन चुका था। दिल्ली के बाद वो करांची और लाहौर जाने वाले थे। उन्होंने कहा था कि नक्शे पर भले ही दो देश बँटे हों, दिल नहीं बँटना चाहिए। दिल जोड़ने का काम करना है तो कभी देश भी जुड़ जाएंगे। दिलों को जोड़ने का वो काम अभी भी बाकी है और आप उस समय याद कीजिए जब नेहरु जी एक बार पाकिस्तान गए थे, ऐसी जनता उमड़ पड़ी थी कि पाकिस्तान के हुक्मरानों का ब्लड प्रेशर बढ़ गया। इतने नेहरु पापुलर हैं हमारे देश में। वो तो जहाँ जाते थे जनता उमड़ पड़ती थी तो ये जो दोनों का सपना है, उस सपने की ओर आपका ध्यान मैं खींचना चाहती हूँ।

अब जब साउथ अफ्रीका में गांधी का सपना पूरा हो सकता है और नेल्सन मंडेला राष्ट्रपति बन सकते हैं तो क्या हम और पाकिस्तान जो सहोदर भाई हैं क्या हम लोगों में दोस्ती नहीं हो सकती? ये भारतीय उप महाद्वीप क्या दोस्ती के माहौल में जी नहीं सकता? ये हमारे सामने प्रश्न चिन्ह है। मैं विनम्रता के साथ इस भिलाई जैसे आदर्श नगर के

इन सब बुद्धिजीवियों के साथ कहना चाहती हूँ कि अब वो क्षण इतिहास का आ गया है कि भारत की जनता भारत की बुद्धिजीवी, भारत के कलाकार, भारत के लेखक जाग उठें और कहें कि हम दोस्ती का हाथ बढ़ाते हैं। इन हुक्मरानों को भूल जाइए। पाकिस्तान, हिन्दुस्तान, बंग्लादेश की जनता हम दोस्त नहीं, हम भाई हैं। हम एक परिवार के सदस्य हैं। चलिए, हम फिर से वो दोस्ती का माहौल बनाएँ तो गांधी और जवाहरलाल दोनों के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

मैं आप सबकी सेवा में यह बात निवेदन कर के विनम्रता के साथ प्रार्थना करती हूँ कि दुनिया हमसे पूछ रही है। इतिहास हमसे पूछ रहा है कि गांधी के देश में आपको जन्म मिला है। क्या कर रहे हैं आप?

दुर्लभ भारते जन्मामनुएयम सत्र दुर्लज्ञभम् ।

बड़े भाग्य से भारत में जन्म मिलता है और मनुष्य का जन्म उससे भी अधिक भाग्य से। क्यों? इसलिए कि हिमालय सब से ऊंचा पहाड़ है। सही है। गंगा बड़ी पवित्र नदी है। सही है, लेकिन ये देश महान इसलिए बना, यहाँ हिमालय से भी ऊँचे और गंगा से भी पवित्र इंसान होते रहे हैं। ऐसे मनुष्यों की आज खोज है और वो मनुष्य कभी गांधी था, कभी जवाहर था, कभी विनोबा था।

●●●

इतिहासकार नेहरु

● कनक तिवारी

बेसिल मेथ्यूस (जिन्हें पं. जवाहरलाल नेहरु ने अपनी विश्व इतिहास की झलक समर्पित की थी) ने ठीक ही कहा था कि भविष्य के आइने में नेहरु की तस्वीर एक प्रखर राजनीतिज्ञ के रूप में भले न उभरे, एक कलम के धनी के रूप में वह सदियों याद किये जायेंगे। विशविख्यात पत्रकार जान गुन्थर के अनुसार इस सदी में नेहरु की टक्कर के लेखक इने-गिने ही हुए हैं। वस्तुतः जवाहरलाल ऐसे राजनीतिज्ञ नहीं थे जो अवकाश के क्षणों में मनोरंजन के लिए साहित्य-सृजन का ढोंग रखते थे। साहित्य बल्कि इतिहास के लिए यह विशेष दुर्भाग्य का विषय है कि राजनीति ने एक मौलिक प्रबुद्ध चिन्तक और असाधारण लेखक उससे छीन लिया था। अपनी आत्मकथा में उन्होंने अपना मानसिक अन्तर्द्वन्द्व, हृदय की वेदना, महत्वाकांक्षाएं और असफलताएं कलाकार की नैतिक ईमानदारी के साथ अभिव्यक्त की हैं। एक महान मानववादी इतिहासकार के रूप में 'विश्व इतिहास की झलक' में उन्होंने सम्पूर्ण विश्व वांग्मय का संतुलित सर्वेक्षण प्रस्तुत किया है तथा 'भारत की खोज' में उन्होंने भारत के अतीत की महानता के गीत गाए हैं।

'विश्व इतिहास की झलक' में नेहरु ने विनम्रता पूर्वक लिखा है—"मैं इतिहासकार होने का दावा नहीं करता। मेरे ये समस्त पत्र असंख्य गलतियों से भरे पड़े हैं।" परंतु वस्तुस्थिति ठीकइसके

यद्यपि सम्पूर्ण विश्व का इतिहास एक ही ग्रंथ में लिखना दुष्कर कार्य है परन्तु जवाहरलाल ने विषय वस्तु के साथ यथेष्ट न्याय किया है। इसका मूल कारण यह था कि सम्बद्ध युग की आत्मा को पहचानने एवं अभिव्यक्त करने मे जवाहरलाल ने ग्रंथाकारों एवं दंतकताओं की अपेक्षा कविता, साहित्य, ललित क़लाओं, धर्मगृहों तथा यात्रा विवरणों का अधिक उपयोग किया है। ' विश्व इतिहास की झलक' उन्हें अप्रतिम इतिहासकारों के समकक्ष प्रतिष्ठित करती है। उसमें हमें अपूर्णता का आभास नहीं होता।

विपरीत है। आलोचक के अनुसार के तथ्य अधिक प्रामाणिक और भाषा अधिक जीवन्त है । नेहरु को इतिहास से असीम प्यार था। उनका वर्णन पेशेवर इतिहासकारों की तरह केवल मृत घटनाओं और स्थलों का उल्लेख मात्र नहीं है। इन आंकड़ों तथ्यों एवं घटनाओं से लैस होने की अपेक्षा उन्होंने इतिहास के जीवन की साँस फूंकी है। अपनी कृतियों में उन्होंने काव्यात्मक त़थ्य संप्रेषित किये हैं। जवाहरलाल ने पहली बार इतिहास और कविता को परम्परागत शत्रुता का लबादा उतारकर उन्हें पूरक सिद्धांतों के रूप में पेश किया। उनके अनुसार इतिहास और कविता जीवन के अंश पहले हैं, सामाजिक विज्ञान तथा कला बाद में। यह एक मौलिक साहसिक प्रयोग है। ऐसे लोग भी हैं जिन्हें इतिहास और रोमांस का यह गठबंधन मुग्ध नहीं करता। ये इतिहास को सैनिक तथा कूटनीतिक इतिवृत्त समझते हैं लेकिन वे यह नहीं समझत कि रीति-रिवाजों और नैतिक मान्यताओं का इतिहास जो प्रत्येक नई पीढ़ी के साथ बदलता है-संधिविग्रहों के इतिहास से कहीं ज्यादा दिलचस्प है।

'पुत्री के नाम पिता का पत्र' तथा 'विश्व इतिहास-की झलक' सीधी-सादी प्रवाहमान निश्छल भाषा में जीवन के विभिन्न पक्षों का चित्रण उपस्थित करते हैं। नेहरु की व्यापक मानवीय सहानुभूति तथा मानवतावादी दृष्टिकोण ही इनकी विशेषता है। नेहरु जी का विशद अध्ययन कभी प्राचीन ग्रीक वैभव की कहानी कहने लगता है जो कभी बीसवीं सदी के भारत का संघर्ष मुखर हो उठता है परंतु उनका स्वर एक निराश बुद्धिजीवी का स्वर नहीं है। मर्मांतक पीड़ा से व्यथित होकर भी यह महान सेनानी प्रचण्ड आत्मविश्वास के स्वर में बोल उठा है-"इस बीसवीं सदी में शांति नहीं है। सारा संसार कड़ी मेहनत कर रहा है और दुनिया को शांति तथा युद्ध की काली छाया ओढ़े हुए हैं। यदि हम इस नियति से बच नहीं पाये तो उसका सामना कैसे करेंगे? क्या हम घोंघों की तरह अपना मुंह छिपा लेंगे या हम नये इतिहास का निर्माण करने में महत्वपूर्ण हिस्सा लेंगे? क्या हम खतरों और संकटों का मुकाबला कर सकेंगे और यह महसूस करेंगे कि हमारे कदम इतिहास के निर्माण कर रहे हैं?"

(विश्व इतिहास की झलक से)

यद्यपि सम्पूर्ण विश्व का इतिहास एक ही ग्रंथ में लिखना दुष्कर कार्य है परन्तु जवाहरलाल ने विषय वस्तु के साथ यथेष्ट न्याय् किया है। इसका मूल कारण यह था कि सम्बद्ध युग की आत्मा को पहचानने एवं अभिव्यक्त करने मे जवाहरलाल ने ग्रंथाकारों एवं दंतकताओं की अपेक्षा कविता, साहित्य, ललित कलाओं, धर्मगृहों तथा यात्रा विवरणों का अधिक उपयोग किया है। विश्व इतिहास की झलक' उन्हें अप्रतिम इतिहासकारों के समकक्ष

इस महान कृति के माध्यम से पाठक इतिहास विषयक अपने अपने ज्ञान में वृद्धि करने के साथ ही समय की परतों की गहराइयों में डूबता चला जाता है। स्वप्निल बोझिलता से उसके अन्तर की आंखें मुंदने लगती हैं। इतिहास का महान विद्यार्थी नेहरु उंगली पकड़कर हमें वर्तमान और अतीत की दुनिया की नुमाइश में सैर कराता है। पाठक जैसे अपनी बौद्धिक उपस्थिति का लबादा उतारकर फेंक देता है। अद्‌भुत प्रेषणीयता, अतुलनीय वर्णन-शक्ति, अद्वितीय सृजनशीलता से युक्त इस कृति में पाठक को महाकाव्योचित उदात्तता के दर्शन होते हैं।

प्रतिष्ठित करती है। उसमें हमें अपूर्णता का आभास नहीं होता।

जवाहरलाल ने इतिहासकारों की फौज से अलग हटकर कुछ मौलिक प्रतिस्थापनाएं भी की हैं। उन्होंने प्रचलित मान्यता के विरुद्ध मेकियाविली को बहुत साधारण राजनीतिज्ञ के रूप में ही स्वीकारा। उन्हें इस बात का आश्चर्य था कि यूनान के बेटों में सिकन्दर इतिहासकारों की निगाह में अरस्तु, प्लेटो और सुकरात से कहीं अधिक कैसे चढ़ सका। उनकी राय में चंगेजखान और तैमूरलंग जैसे 'महानतम योद्धा' अपेक्षाकृत कुरूप चित्रित किये गये हैं। ब्रिटिश हुकूमत से नफरत करने की अपेक्षा उन्होंने भारत की गुलामी का यह कारण खोजा : दोष हमारा ही है क्योंकि हम आपस में लड़ते-झगड़ते हैं। नेहरु के अनुसार पूर्व और पश्चिम के विभेद की पृष्ठभूमि तथाकथित 'भौतिकता' और 'आध्यात्मिकता' नहीं वरन् 'औद्योगीकरण तथा अनौद्योगीकरण' एवं 'वैज्ञानिकता तथा अवैज्ञानिकता' है। 'विश्व इतिहास की झलक' में उन्होंने एशिया के नेतृत्व का महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया है। उनकी राय में एशिया यूरोप का गुरु रहा है। ज्ञान की अनेक विधाओं के

जनक एशिया के ही राष्ट्र रहे हैं। परन्तु उन्हें यूरोप से नफरत नहीं है। वस्तुतः दुनिया के समक्ष जो प्रश्न है उनकी कोई जातीय या राष्ट्रीय नस्ल नहीं है। वे सार्वभौमिक हैं। इतिहास और भूगोल के थपेड़ों ने नेहरु के व्यक्तित्व को संवारा, लेकिन उनकी बौद्धिक चेतना हल्की सरहदों वाली भूगोल और सिमटते इतिहास तक कभी सीमित नहीं रही।

सन् 1942 के 'भारत छोड़ो' आंदोलन के अन्तर्गत जवाहरलाल नेहरु नौवीं बार गिरफ्तार कर आगा खां महल में रखे गये। लेखक नेहरु के लिये यह वरदान था। उन्होंने कारागार की अवधि में ही अपनी विख्यात कृति 'ए डिस्कव्हरी ऑफ इंडिया' लिखी। 600 से अधिक पृष्ठों का का यह ग्रन्थ उन्होंने पांच महीनों (अप्रैल-सितम्बर 1944) से भी कम अवधि में लिखा। भारत के विशाल नक्शे की एक-एक रेखा नेहरु ने एक कुशल चित्रकार की तरह आंकी है। इठलाती हुई नदियां, सूखे, बेजान मरुस्थल, उछलते, हँसी बिखेरते झरने, डरावने, रहस्यमय जंगल, काली, अभेद्य घाटियां, ऊँचे ऊँचे बर्फीले पर्वत, फैले हुए मैदान-सारा भारत एक ही दृष्टि में जैसे सजीव हो उठता है। भूगोल ही नहीं इतिहास की घटनाएं भी एक-एक कर स्मृति पटल पर नाचने लगती हैं। बादशाहों के वैभव व ऐश्वर्य की गाथाएं, सत्ता के लिए षडयंत्र, साम्राज्यों का पतन कला एवं संगीत के चरमोत्कर्ष के क्षण, महाकाव्यों की महान परम्पराएं, भारत के वक्ष पर प्रस्तुत होने वाली झाकियां-आंखों के सामने नाच करते हैं। वर्णन की सहजता, अनुभूतिजन्य विवेचना, वातावरण की सजीवता, साँसों की गरमाहट व तकनीकी मानदण्ड से 'भारत की खोज' पं. नेहरु की सर्वश्रेष्ठ कृति घोषित की जा सकती है। इतना सशक्त

वर्णन किया है लेखक ने कि अक्षर बोलने के साथ-साथ चित्र खींचते से प्रतीत होते हैं। इस महान कृति के माध्यम से पाठक इतिहास विषयक अपने अपने ज्ञान में वृद्धि करने के साथ ही समय की परतों की गहराइयों में डूबता चला जाता है। स्वप्निल बोझिलता से उसके अन्तर की आंखें मुंदने लगती हैं। इतिहास का महान विद्यार्थी नेहरु उंगली पकड़कर हमें वर्तमान और अतीत की दुनिया की नुमाइश में सैर कराता है। पाठक जैसे अपनी बौद्धिक उपस्थिति का लबादा उतारकर फेंक देता है। अद्‌भुत प्रेषणीयता, अतुलनीय वर्णन-शक्ति, अद्वितीय सृजनशीलता से युक्त इस कृति में पाठक को महाकाव्योचित उदात्तता के दर्शन होते हैं।

टी.एस. इलियट ने अपने एक निबन्ध में यह स्वीकार किया था कि शेक्सपियर प्लूटार्क को पढ़कर ही इतना इतिहास जानता था जितना ब्रिटिश म्यूजियम में रखी किताबों से कोई जान नहीं सकता है। 'विश्व इतिहास की झलक, एवं 'भारत की खोज' पढ़कर ही एक साधारण पाठक इतिहास विषयक अपनी उत्सुकता शांत कर सकता है। ये पुस्तकें एक साथ ही 'अरब की रातें', 'पंचतंत्र' ग्रीक महाकाव्य और शरलाक होम्स के उपन्यासों का मजा देती है। महादेव देसाई ने ठीक ही कहा था कि भारतीय स्वाधीनता आंदोलन का कोई भी विवरण नेहरु की कृतियों से अधिक सजीव, प्रामाणिक और विशद नहीं है। आलोचकों ने इतिहासकार नेहरु की तुलना लुई फ्लाक, हर्डर, स्पेंग्लर एवं आर्नल्ड टायम्बीं से की है। इन सभी इतिहासकारों की मौलिक विसेषता है उनका प्रबुद्ध एवं तटस्थ दार्शनिक पक्ष। इसलिए इतिहास की किसी भी घटना में तारतम्य के लिए ही तथ्यों में तोड़-मरोड़ उन्हें पसन्द नहीं है। पं.

नेहरु के प्रख्यात आलोचक प्रो. नरसिंहैया ने नेहरु को अंग्रेज लेखक एच. जी. वेल्स से अधिक शक्तिशाली घोषित किया है। मानवेन्द्रनाथ राय की राय में नेहरु की सफलता का रहस्य इसी में है कि वे अपनी भावनात्मक प्रतिक्रियाओं की भी एक वैचारिक पृष्ठभूमि को प्रश्रय दे देते हैं।

●●●

वस्तुतः नेहरु देशकाल को इतिहास के गवाक्ष के बिना न देख पाते हैं, न ही समझ पाते हैं। इसके ठीक विपरीत गांधी और जीवन के विपरीत न तो ऐसी कोई बाध्यता है न दृढ़ता। गांधी भी विलायत गये थे। थोड़ा बहुत उन्हें भी वहाँ अंग्रेजियत ने मोहा था लेकिन वहाँ मन, प्राण और देह पर जितना भी जादू था वह उन्हें चापे रहता, अगर वे भारत लौटकर केवल एक बैरिस्टर भर बने रहते। उस स्थिति में पोरबन्दर वाला भीरू मोहन का ही विलायत पलट वह स्वरूप होता लेकिन भीरू मोहन और भावी गांधी के बीच अफ्रीका के प्रवास में एक ऐसा दुर्दान्त हस्तक्षेप किया गया कि बीज को पता ही नहीं था कि वह सेमल का नहीं, अक्षय वट का संवाहक है। नेहरु के सन्दर्भ में ऐसा कुछ घटित नहीं हुआ। उनमें और स्थानीय परिवेश में कोई समरसता नहीं थी। वह वस्तुतः अपने सत्य की विकल लपट के लिए ईंधन की तलाश में, परिवेश में भटकती आग थे। अपने मध्यकालीन सामन्ती स्वभाव, अंग्रेजी आधुनिक मानसिकता की अपने परिवेश से वे चूल नहीं बैठाल पा रहे थे। वस्तुतः यह सर्जक के अकेलेपन की एक ऐसी विकलता थी जिसका समाधान उन्हें इतिहास के प्रशान्त सागर के तट पर ले जाता था।
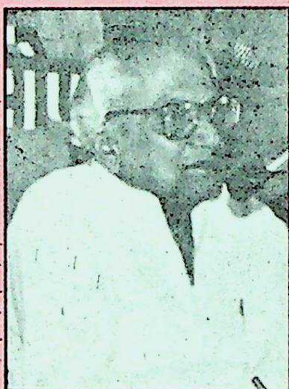
नरेश मेहता

Printed at : Drishti Offset, Bhopal Ph. 576733, 591106